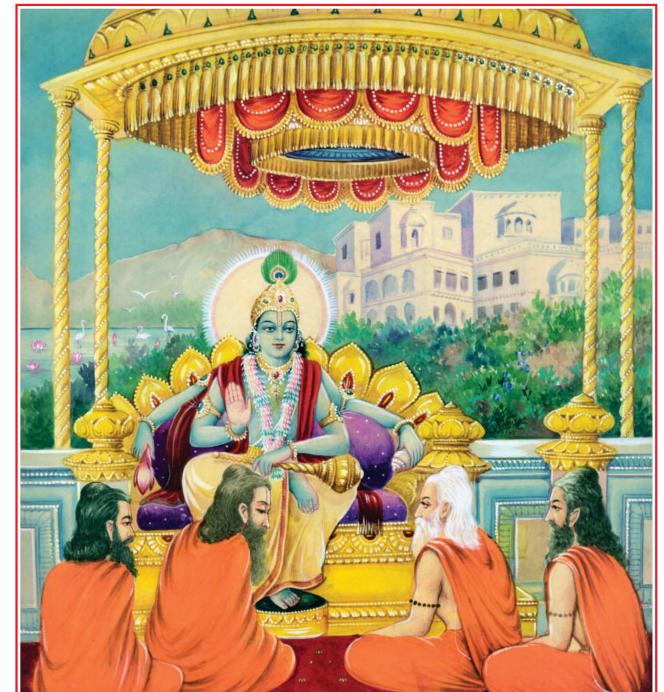
कल्याण



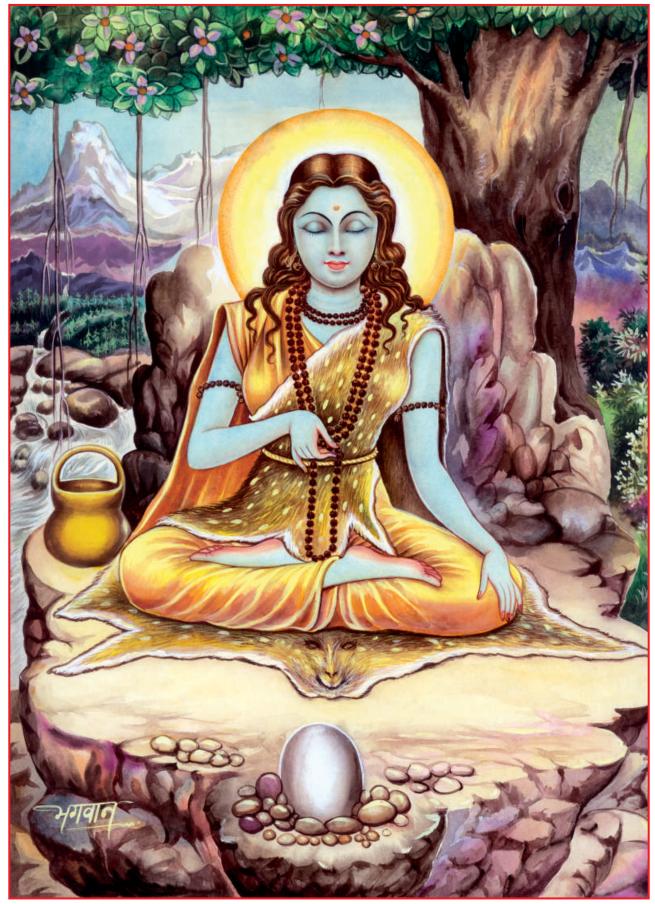
श्रीकृष्णका सायंकालीन ध्यान

गीताप्रेस, गोरखपुर

वर्ष १६ मूल्य १० रुपये

संख्या





शिवध्यानरत भगवती पार्वती

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥



होइ गिरिबर मूक पंगु गहन। बाचाल चढ़इ जासु कृपाँ कलि सो दयाल द्रवउ सकल मल दहन॥

गोरखपुर, सौर भाद्रपद, वि० सं० २०७९, श्रीकृष्ण-सं० ५२४८, अगस्त २०२२ ई०

प्रानपति

धरि

उर

पूर्ण संख्या ११४९

÷

░

ૹ

ૹ૽

÷

÷

ૹ૽

ૹ

ૹ

÷

संख्या

भगवान् शंकरकी वररूपमें प्राप्तिहेतु पार्वतीजीकी तपस्या

चरना। जाइ

बिपिन

लागीं

तपु

भोगू॥ જ઼ अति जोगू। पति पद सुमिरि तजेउ सुकुमार तनु तप सब् उपज अनुरागा । बिसरी नित देह तपहिं नव मनु लागा॥ ░ गवाँए॥ संबत खाए। सागु सहस मूल फल खाइ सत बरष જ઼ बारि भोजनु बतासा। किए दिन कठिन कछु दिन कछ उपबासा॥ ા सुखाई । तीनि महि सोइ बेल पाती संबत खाई॥ परइ सहस ÷ पुनि परिहरे सुखानेउ परना । उमहि अपरना ॥ नामु तब भयउ જી देखि भै गभीरा॥ उमहि सरीरा। ब्रह्मगिरा खीन 6 तप गगन જ઼ गिरिराजकुमारि। सुफल तव सुनु ા दुसह कलेस सब अब मिलिहहिं त्रिपुरारि॥ [श्रीरामचरितमानस]

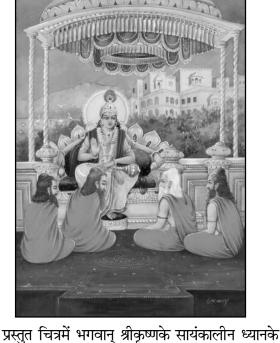
	। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ १,८०,०००)				
कल्याण, सौर भाद्रपद, वि० सं० २०७९, श्रीकृष्ण-	- सं० ५२४८, अगस्त २०२२ ई०, वर्ष ९६—अंक ८				
विषय-सूची					
विषय पृष्ठ-संख्या	विषय पृष्ठ-संख्या				
१- भगवान् शंकरकी वररूपमें प्राप्तिहेतु पार्वतीजीकी तपस्या	१७- जीवनमें सद्गुणोंकी वृद्धि कैसे हो? [प्रेषक—प्रो० श्रीसन्तोष कुमारजी तिवारी]				
——●• चित्र-					
१ - श्रीकृष्णका सायंकालीन ध्यान(रंगीन) आवरण-पृष्ठ २ - शिवध्यानरत भगवती पार्वती(''') मुख-पृष्ठ ३ - श्रीकृष्णका सायंकालीन ध्यान(इकरंगा)	७ - परस्पर युद्धरत सुन्द-उपसुन्द (इकरंगा)				
एकवर्षीय शुल्क विचन्द्र जयित जय।	सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय ॥ पंचवर्षीय शुल्क				
सभी अंक रजिस्ट्रीसे एकवर्षीय शुल्क ₹ 300 मासिक अंक साधारण डाकसे जय जगत्पते। विदेशमें Air Mail शुल्क पंचवर्षीय US\$ 250	(`20,000) {Charges 6 \$ Extra मासिक अंक साधारण डाकसे				
संस्थापक — ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका आदिसम्पादक —नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार					
आदिसम्यदिक —ानत्यलालालान सम्पादक —प्रेमप्र	. •				
केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्द्भवन-कार्यालय के					
	n@gitapress.org				
सदस्यता–शुल्क —व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—273005, गोरखपुर को भेजें। Online सदस्यता हेतु gitapress.org पर Kalyan या Kalyan Subscription option पर click करें। अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क gitapress.org अथवा book.gitapress.org पर नि:शुल्क पढ़ें।					

संख्य	[ነፐ						सम्पा	दकीय							ų
25 25 25 25	5 55 55 55 55 55 5	£ 55 55 55 5	5555555	55 55 55 55 55 56 56 56 56 56 56	555555	F 5F 5F 5F 5F 5	F 5F 5F 5F 5F	5555	5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5	555555	55 55 55 55 55	55555555555555555555555555555555555555	555555	£ 55 55 55 5	<u> </u>
हरे	राम	हरे	राम	राम	राम	हरे	हरे।	हरे	राम	हरे	राम	राम	राम	हरे	हरे।
हरे	कृष्ण	हरे	कृष्ण	_{कृष्ण}	_{कृष्ण}	हरे	हरे॥	हरे	ू कृष्ण	हरे	कृष्ण	_{कृष्ण}	_{कृष्ण}	हरे	हरे ॥
हरे	राम	हरे	राम	राम	राम	हरे	हरे।	हरे	राम	हरे	राम	राम	राम	हरे	हरे।
हरे	कृष्ण	हरे	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे	हरे॥	हरे	कृष्ण	हरे	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे	हरे॥
हरे	राम	हरे	राम	राम	राम	हरे	हरे।	हरे	र राम	हरे	राम	राम	राम	हरे	हरे।
हरे	कृष्ण	हरे	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे	हरे॥	हरे	कृष्ण	हरे	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे	हरे॥
हरे	राम	हरे	राम	राम	राम	हरे	हरे।	हरे	राम	हरे	राम	राम	राम	हरे	हरे ।
हरे	कृष्ण	हरे [कृष्ण	हरे	हरे ॥
हरे	राम	हरे					॥ श्रीह						राम	हरे	हरे ।
हरे	कृष्ण	हरे	सा	धकोंके	जीव	नमें स	जगता	और	सतर्क	ता बर्	हुत जर	त्री है।	कृष्ण	हरे	हरे ॥
हरे	राम	हरे	यदि अ								-		राम	हरे	हरे ।
हरे	कृष्ण	हरे				`							कृष्ण	हरे	हरे ॥
हरे	राम	हरे	यह जाँच										राम	हरे	हरे ।
हरे	कृष्ण	हरे	मन-बुबि	द्वसे हो	रहे है	, क्य	ा उन्हें	हमने	भगवा	न्की	कृपा-व	क्रणासे	कृष्ण	हरे	हरे ॥
हरे	राम	हरे	होता हु	आ जा	ना-सम	झा है द	? क्या	हमने	दीनभ	ावसे ः	उन्हें भग	ावदर्पण	राम	हरे	हरे ।
हरे	कृष्ण	हरे	किया है	: ? यति	नहीं.	तो भ	गिवानर	ने अप	ानी भल	नकी ह	थमा माँ	गते हार	कृष्ण	हरे	हरे ॥
हरे	राम	हरे					-					97	राम	हरे	हरे ।
हरे	कृष्ण	हरे	साधनमा	-								_	कृष्ण	हरे	हरे ॥
हरे	राम	हरे	र्या	दे अपन	ग मार्ग	ज्ञानव	त है उ	भीर स	वयंके र	पच्चिद	ानन्द स्ट	त्ररूपकी	राम	हरे	हरे ।
हरे	कृष्ण	हरे	झलक	मिलनी	शुरू	हो गर्य	र्गी है,	तो इ	न्द्रियसम्	हिसे ह	ो़नेवाले	प्रत्येक	कृष्ण	हरे	हरे ॥
हरे	राम	हरे	क्रियाक		-				7				राम	हरे	हरे ।
हरे	कृष्ण	हरे										•	कृष्ण	हरे	हरे ॥
हरे	राम	हरे	भी हम			•							राम	हरे	हरे।
हरे	कृष्ण	हरे	देखते र	हें कि	यह ह	रहा	है औ	र मैं	केवल	इसे ह	होता हु	भा देख	कृष्ण	हरे	हरे ॥
हरे	राम	हरे	रहा हूँ।										राम	हरे	हरे।
हरे	कृष्ण	हरे		टे निष्ठ	பா−க	ப் கா ர	प्राधनम	र्गाट	पने चन	ग ट्रै	तो हर	क्रिया-	कृष्ण	हरे	हरे॥
हरे	राम	हरे							_				राम	हरे	हरे।
हरे	कृष्ण	हरे	कलापव		•.								कृष्ण	हरे	हरे॥
हरे	राम	हरे	करते स	ामय ह	में याद	रहे वि	कि हम	। भग	वान्की	दी ह	हुई प्रेरण	गा और	राम	हरे	हरे।
हरे	कृष्ण	हरे	क्रियाश	क्तिसे उ	से कर	रहे हैं	और उ	सके व	होनेके ब	बाद उ	सकी स	फलता-	कृष्ण	हरे	हरे॥
हरे	राम	हरे	विफलत										राम	हरे	हरे।
हरे	कृष्ण	हरे			(171	(64)	5(1 5	111191	47.1	ત્રનુ	1(9114	(14114(1	कृष्ण	हरे	हरे॥
हरे - 	राम	हरे 	कर दें।				.•		. .			•	राम	हरे - र े	हरे। } ::
हरे -रे	कृष्ण	हरे - 	मा	ग कोई	हो,	चलनेम्	1 सजग	ाता र	नरूरी है	ह, अ	न्यथा स	ावधानी	कृष्ण	हरे -	हरे॥
हरे -र े	राम	हरे - 	हटी, दु	र्घटना घ	ाटी। ना	रायण	हरि						राम	हरे -र े	हरे। } ::
हरे -र ो	कृष्ण	हरे - 	. 9								—सम	गदक	कृष्ण	हरे }	हरे॥
हरे	राम	हरे											राम	हरे	हरे। ——े
हरे —-	कृष्ण	हरे -	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे - >	हरे ॥ ————————————————————————————————————	हर <u>े</u>	कृष्ण	हरे - >	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे —	हरे ॥ —
हरे —-	राम	हरे —	राम	राम	राम	हरे —	हरे। —े ::	हरे —	राम	हरे —>	राम	राम	राम	हर <u>े</u>	हरे। —े
हरे -रे	कृष्ण	हरे - 	कृष्ण ——	कृष्ण	कृष्ण	हरे रे	हरे॥ 	हरे - `	कृष्ण	हरे -र े	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे -	हरे॥
हरे —-	राम	हरे —	राम	राम	राम	हरे —	हरे। —े ::	हरे —	राम	हरे —>	राम	राम	राम	हर <u>े</u>	हरे। ——े
हरे —-	कृष्ण	हरे —-	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे —	हरे॥ ————————————————————————————————————	हरे - 	कृष्ण	हरे -र े	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे -	हरे ॥
हरे टो	राम	हरे टो	राम	राम	राम	हरे चो	हरे। टो "	हरे टो	राम	हरे जो	राम	राम	राम	हरे जो	हरे। जो "
हरे च े	कृष्ण	हरे ज े	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे च े	हरे॥ च ेः	हरे च े	कृष्ण	हरे चो	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे च े	हरे॥ च ेः
हरे - र े	राम	हरे -र े	राम 	राम ———	राम 	हरे चो	हरे। -रो "	हरे -र े	राम	हरे रो	राम	राम	राम	हरे च े	हरे। - र ो ::
हरे	कृष्ण	हरे	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे	हरे ॥	हरे	कृष्ण	हरे	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	हरे	हरे ॥

िभाग ९६ कल्याण याद रखो-जगत्में जो कुछ है, सब केवल देते हैं। छठे वे हैं, जो जान-बूझकर सदा दूसरोंकी हानि ही करते हैं और उसीमें अपना लाभ मानते भगवानुका ही मूर्तरूप है, सभीमें भगवान् विराजमान हैं और सातवें सबसे नीच मनुष्य वे हैं, जो अपनी हैं। केवल मनुष्योंमें ही नहीं—पश्-पक्षी-कीट-पतंग हानि करके भी दूसरोंको हानि पहुँचाना चाहते हैं। सभीमें और इन चेतन प्राणियोंमें ही नहीं, समस्त जड याद रखो-दूसरोंकी हानिमें जो अपना लाभ वर्गमें भी भगवान् हैं। श्रीमद्भागवतमें योगीश्वर कविने मानता है अथवा दूसरोंके लाभमें जो अपनी हानि बतलाया है— मानता है, वे दोनों ही भूले हुए हैं। जिससे दूसरोंको खं वायुमिंगं सलिलं महीं च लाभ होगा, उसमें तुम्हारी हानि होगी ही नहीं और ज्योतींषि सत्त्वानि दिशो द्रुमादीन्। जिससे दूसरोंकी हानि होगी, उसमें तुम्हारा लाभ होगा सरित्समुद्रांश्च हरे: शरीरं ही नहीं। यत् किञ्च भूतं प्रणमेदनन्यः॥ अर्थात् 'आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, याद रखो-जो मनुष्य दूसरेकी हानिमें अपना ग्रह-नक्षत्र, प्राणी, दिशाएँ, वृक्ष, वनस्पति, नदी, लाभ मानता है, वह बडा ही अभागा है; क्योंकि उसका जीवन पाप-जीवन बन जाता है और जो समुद्र'—सभी श्रीहरिके शरीर हैं। ऐसा जानकर चराचरमात्रको अनन्य भगवद्भावसे प्रणाम करे। अतएव दूसरेके लाभमें ही अपना लाभ मानता है और सदा दूसरोंके हितसाधनमें लगा रहता है, वह बड़ा सौभाग्यवान् सबमें भगवान समझकर सबकी अपने कर्मके द्वारा सेवा करो, सबको यथासाध्य सुख पहुँचाओ और है, उसपर भगवानुकी बड़ी कृपा है। याद रखो-जो सब जीवोंमें भगवानुको देखते सबका हित-साधन करो। याद रखों - जो दूसरे प्राणियोंका अहित करता हैं, उनके द्वारा तो ऐसा कोई काम कभी होगा ही नहीं, जिससे किसीको हानि पहुँचे या किसीका अहित हो। है, वह मानो भगवानुका ही अहित करता है। इसलिये वे तो नित्य-निरन्तर अपने प्रत्येक कर्मके द्वारा भगवान्की कभी किसीका भी अहित न तो करो, न चाहो। यह पूजा ही करते हैं। समझो कि तुम्हारे पास जो कुछ भी साधन-सामग्री है, सभी जगत्-रूप भगवान्की सेवाके लिये ही है। *याद रखो* — जब प्राणिमात्रमें भगवद्भाव निश्चित हो जाता है, तब सर्वत्र भगवानुकी झाँकी होने लगती अपनेको अनन्य सेवक मानो। याद रखो-संसारमें सात प्रकारके मनुष्य हैं-है और समस्त क्रियाओंमें भगवान्की लीलाके दर्शन सबसे श्रेष्ठ वे हैं, जो अपनी हानि करके भी दूसरोंको होने लगते हैं। लाभ पहुँचाते हैं। दूसरे वे हैं, जो अपनी हानि न करके याद रखो — जब तुम्हारा सर्वत्र सबमें भगवद्भाव हो जायगा, तब तुम्हारे लिये कोई भी पराया नहीं रह दूसरोंको लाभ पहुँचाते हैं। तीसरे वे हैं, जो अपने जायगा। इस अवस्थामें क्षुद्र स्वार्थवश होनेवाले वैर-लाभके लिये ही प्रयत्नवान् रहते हैं, दूसरोंकी चिन्ता विरोध, कामना-वासना, राग-द्वेष आदि दोषोंका सर्वथा नहीं करते। चौथे वे हैं, जो अपने लाभमें दूसरोंकी हानि अभाव हो जायगा, जीवन त्यागमय होगा और हृदयमें होती देखते हैं तो उसे सह लेते हैं, कोई परवा नहीं करते। पाँचवें वे हैं, जो दूसरोंकी हानि होती हो और प्रेम, आनन्द और शान्तिकी निर्मल सरिता बहने लगेगी। उसमें अपना लाभ दीखता हो तो दूसरोंको हानि पहुँचा Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh आवरणचित्र-परिचय

भगवान् श्रीकृष्णका सायंकालिक ध्यान

भगवान् श्रीकृष्णका सायंकालिक ध्यान है, जिसपर त्रिभुवनमोहन श्रीकृष्ण बैठे हैं। उनसे



संख्या ८]

स्वरूपको चित्रित किया गया है। सायंकालमें भगवान् श्रीकृष्ण द्वारकापुरीमें एक सुन्दर भवनके भीतर विराजमान हैं, जो विचित्र उद्यानसे सुशोभित है। वह श्रेष्ठ भवन आठ हजार गृहोंसे अलंकृत है। उसके चारों ओर निर्मल जलवाले सरोवर सुशोभित हैं। हंस, सारस आदि

पक्षियोंसे व्याप्त उन सरोवरोंकी कमल और उत्पल आदि पुष्प शोभा बढ़ाते हैं। उक्त भवनमें एक शोभासम्पन्न मणिमय मण्डप है, जो उदयकालीन सूर्यदेवके समान

अरुण प्रकाशसे प्रकाशित हो रहा है। उस मण्डपके भीतर सुवर्णमय कमलकी आकृतिका सुन्दर सिंहासन

द्वारवत्यां

* सायाह्ने

चारुप्रसन्नवदनं

मुनियोंको अपने अविनाशी परम धामका उपदेश दे रहे हैं। उनकी अंगकान्ति विकसित नीलकमलके समान श्याम है। दोनों नेत्र प्रफुल्ल कमलदलके समान विशाल हैं। सिरपर स्निग्ध अलकावलियोंसे संयुक्त सुन्दर किरीट सुशोभित है। गलेमें वनमाला शोभा पा रही है। प्रसन्न

मुखारविन्द मनको मोहे लेता है। कपोलोंपर मकराकृति

आत्मतत्त्वका निर्णय करानेके लिये मुनियोंके समुदायने उन्हें सब ओरसे घेर रखा है। भगवान् श्यामसुन्दर उन

कुण्डल झलमला रहे हैं। वक्ष:स्थलमें श्रीवत्सका चिह्न है। वहीं कौस्तुभमणि अपनी प्रभा बिखेर रही है। उनका स्वरूप अत्यन्त मनोहर है। उनका वक्ष:स्थल केसरके अनुलेपसे सुनहली प्रभा धारण करता है। वे रेशमी पीताम्बर पहने हुए हैं, विभिन्न अंगोंमें हार,

बाजूबन्द, कड़े और करधनी आदि आभूषण उन्हें

अलंकृत कर रहे हैं। उन्होंने पृथ्वीका भारी भार उतार

दिया। उनका हृदय परमानन्दसे परिपूर्ण है तथा उनके

चारों हाथ शंख, चक्र, गदा और पद्मसे सुशोभित हैं।* भक्तोंको इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्णका सायंकालीन ध्यान करना चाहिये। जो प्रतिदिन इस प्रकार सायंकालमें भगवान् वासुदेवका

ध्यान करता है, वह सम्पूर्ण कामनाओंको पाकर अन्तमें परम गतिको प्राप्त होता है। [नारदपुराण, पूर्वभाग अ० ८०]

भ्राजत्कौस्तुभं

हंससारससंकीर्णकमलोत्पलशालिभिः । सरोभिर्निर्मलाम्भोभिः परीते भवनोत्तमे॥ श्रीमणिमण्डपे। हेमाम्भोजासनासीनं कर्ष्णं त्रैलोक्यमोहनम्॥ उद्यत्प्रद्योतनोद्योतद्युतौ परिवृतमात्मतत्त्वविनिर्णये।तेभ्यो मुनिभ्यः स्वं धाम दिशन्तं मुनिवृन्दै: परमक्षरम्॥ पद्मपत्रायतेक्षणम् । स्निग्धकुन्तलसम्भिन्निकरीटवनमालिनम् उन्निन्द्रेन्दीवरश्यामं

चित्रोद्यानोपशोभिते।अष्टसाहस्रसंख्यातैर्भवनैरुपमण्डिते

स्फुरन्मकरकुण्डलम्। श्रीवत्सवक्षसं काश्मीरकपिशोरस्कं पीतकौशेयवाससम्। हारकेयूरकटककटिसूत्रैरलंकृतम् हृतविश्वम्भराभृरिभारं मुदितमानसम्। शङ्ख चक्रगदापद्मराजद्भजचतुष्टयम् (ना॰ पूर्व॰ ८०। ९२—९९)

पिता-पुत्र-सम्बन्धसे भी बढ़कर है धर्म

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

महाराज मरुत्तका जन्म सूर्यवंशमें हुआ था, वे हूँ।' यों कहकर उन्होंने अपने धनुषपर कालास्त्रका

चक्रवर्ती सम्राट् थे। उनका शासन-चक्र सातों द्वीपोंमें संधान किया। इस प्रकार पिता-पुत्रमें युद्ध छिड़ गया।

अबाध रूपसे फैला हुआ था। अपने पिता अवीक्षितके दोनों ही अपनी-अपनी बातपर दुढ थे। एकने

राज्य स्वीकार न करनेके कारण पितामह करन्धमके

प्रजाजनोंकी रक्षाके लिये दुष्टोंके वधका प्रण ले रखा

बाद वे राजसिंहासनपर बैठे। जिस प्रकार पिता अपने था और दूसरा अपनी शरणमें आये हुए सर्पींको

औरस पुत्रोंकी रक्षा करता है, मरुत्त उसी प्रकार रक्षाका वचन दे चुका था। दोनोंकी धर्मनिष्ठा आदर्श

प्रजाजनोंका धर्मपूर्वक पालन करते थे। पुत्रने अपने प्रजा-पालनरूप व्रतमें बाधा

एक बार और्व मुनिके आश्रममें पाताललोकके डालनेवाले पिताकी परवा नहीं की और पिताने अपने

नागोंने आकर दस मुनिकुमारोंको डस लिया। यद्यपि शरणागत-रक्षाके व्रतमें बाधक बने हुए प्राणोपम पुत्रपर

भी शस्त्र उठा लिया।

महर्षिलोग इन सबको अपने ब्रह्मतेजसे भस्म कर

डालनेकी शक्ति रखते थे, फिर भी दण्ड देनेका

अपना अधिकार न समझ वे चुप रहे। इधर जब

राजा मरुत्तको इस बातका पता लगा, तब वे तुरंत ऋषिके आश्रमपर पहुँचे और उन्होंने कुपित हो

पाताललोकनिवासी सम्पूर्ण नागोंका संहार करनेके लिये

संवर्तक नामक अस्त्र उठाया। उस महान् अस्त्रके

तेजसे सारा नागलोक सहसा जल उठा। अब तो साँपोंमें बडा हाहाकार मचा। उनमेंसे कुछ अपने

स्त्री-पुत्रोंको साथ ले मरुत्तके पिता अवीक्षित और उनकी पत्नीकी शरणमें गये। उन्हें रक्षाका आश्वासन

देकर वीर अवीक्षित अपने पुत्रके पास पहुँचे और उन्हें अस्त्र लौटा लेनेके लिये कहा। परंतु मरुत्तने

उनकी बात नहीं सुनी। उन्होंने कहा कि 'नागोंने मुनिकुमारोंको डसा है, हिवध्योंको भी दूषित किया

है तथा आश्रमके सम्पूर्ण जलाशयोंको विषैला कर

दिया है। अत: ये आततायी हैं, इनका वध करनेमें

कोई दोष नहीं है; बल्कि इन्हें दण्ड देना मेरा कर्तव्य

है, अत: आप मेरे कर्तव्य-पालनमें बाधा न डालें।'

इधर अवीक्षितने कहा कि 'इन सबको मैं अभय-

दान दे चुका हूँ, अत: इनकी रक्षा करना मैं अपना

कर्तव्य समझता हूँ, यदि तुम नहीं मानते तो लो मैं

तुम्हारे कोई शत्रु न हों। लिये पिता-पुत्र-सम्बन्धसे भी बढ़कर धर्मकी मर्यादा

अस्त्रके द्वारा ही तुम्हारे अस्त्रका प्रतीकार करता

है। राजा मरुत्त सत्त्व और पराक्रमसे युक्त महान् उल्लंघन नहीं होता था।

प्रयोगसे मुनिकुमारोंको जिला दिया।

तेजस्वी थे। सातों द्वीपोंमें कहीं भी उनकी आज्ञाका

इस प्रकार यह घटना बताती है कि राजाके

धर्मके लिये पिता-पुत्रके बीच यह संग्राम जगत्के

इतिहासमें अनोखा था। दोनोंको एक-दूसरेका वध

करनेके लिये दृढसंकल्प देख भार्गव आदि मुनि बीचमें

पड़ गये और उन्होंने दोनोंको शान्त किया। उन्होंने

कहा कि 'नागलोग डसे हुए मुनिकुमारोंको जिला

देनेके लिये कह रहे हैं; ऐसा होनेसे मरुत्तके द्वारा

प्रजापालन सहज ही हो जायगा और मुनिकुमारोंकी रक्षा हो जानेपर सर्पोंको मारनेकी कोई आवश्यकता

नहीं रह जायगी।' पिता-पुत्र इस बातपर राजी हो

गये और सर्पोंने अपना विष खींचकर दिव्य ओषधियोंके

चरणोंमें प्रणाम किया। अवीक्षितने भी मरुत्तको प्रेमपूर्वक

हृदयसे लगा लिया और कहा-वत्स! तुम शत्रुओंका

मान मर्दन करो, चिरकालतक पृथ्वीका पालन करते

रहो। पुत्र और पौत्रोंके साथ आनन्द भोगो तथा

तदनन्तर राजा मरुत्तने पुनः अपने माता-पिताके

िभाग ९६

संख्या ८] उत्तेजनाके क्षणोंमें हमारे आन्तरिक शत्रु उत्तेजनाके क्षणोंमें [क्रोध, कारण और निवारण] (श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) 'क्रोध पाप कर मूल!' गरमीके दिन हैं। दफ्तरकी छुट्टी है। दोपहरमें खाना जानता हूँ कि क्रोध बड़ी बुरी चीज है। खाकर मजेकी झपकी ले रहा हूँ। इसी समय घरका कोई बच्चा किसी चीजके लिये दुनकने लगता है अथवा क्रोधके चलते क्या नहीं होता? तुलसीबाबाने कहा है— खेलते-खेलते कोई चीज गिरा देता है। मेरी नींद टूट जाती 'क्रोध के परुष बचन बल!' है। अब देखिये मेरा ताव? बच्चेके कान मैंने गरम न किये, परंतु मुझपर जब क्रोध सवारी गाँठता है तब जुबानसे उसकी पीठ लाल न की तो कहिये! जहर ही उगलकर शान्त नहीं हो जाता, मैं मार-पीटपर भी आमादा हो जाता हूँ। हाथ-पैर भी चला बैठता हूँ और जरूरी कामसे पैदल जाना है। रास्तेमें चप्पल बोल कभी-कभी तो उसका दौरा इतना तेज होता है कि हाथमें गयी। मेरे गुस्सेका पार नहीं है। पासमें कहीं मोची न मिले, छ्रा हो तो खुन कर बैठूँ, पिस्तौल हो तो क्रोधके पात्रको अथवा मरम्मतके लिये जेबमें पैसे न हों और श्रीमती गोलीसे उड़ा दूँ। वश चले तो उसका अस्तित्व ही चप्पलको हाथमें लटकाकर ले चलना पड़े तो मेरा क्रोध पृथ्वीतलसे उड़ा दूँ! देखते ही बनता है! कहावत है—'कम कूवत रिस ज्यादा!' रिक्शा पंचर हो गया या 'क्यू'में दूर खड़े होनेसे टिकट मिलनेमें देर हो गयी और प्लेटफार्मपर पहुँचते-दुर्बल व्यक्तिको बहुत तेज गुस्सा आता है। बूढ़ों और बीमारोंका चिडचिडापन प्रसिद्ध ही है। पहुँचते सीटी देकर ट्रेन चल पड़ी। मैं सचमुच रेल देखता शायद दुर्बल कायाके कारण ही मुझे क्रोध अधिक रह गया। अब देखिये मेरा क्रोध! आता हो! पर मैंने देखा है कि मोटे-तगड़े, हट्टे-कट्टे व्यक्ति भी दिनभरका थका बिस्तरपर पड़ा हूँ। आँखें नींदसे क्रोधके शिकार बनते हैं और कभी-कभी उनका क्रोध भारी हैं। ऐसे समय नीचेसे खटमल, ऊपरसे मच्छर काटना चरम सीमापर जा पहुँचता है। शुरू कर देते हैं। अब देखिये मेरा ताव! आपको यदि क्रोध नहीं आता, आप कभी उत्तेजित परंतु कितना ही भारी मत्कुण-यज्ञ करूँ, कैसी भी नहीं होते, उत्तेजनाके क्षणोंमें भी आप शान्त रहते हैं तो अच्छी मसहरी लगाऊँ, जान बचनेवाली है ? परंतु चौकीको आप प्रणम्य हैं, वन्दनीय हैं। आपके चरणोंमें मेरे कोटि-धूपमें डालकर उसपर गरम पानी छिड़ककर भी भला मेरा कोटि प्रणाम! क्रोध शान्त होनेवाला है? बच्चे रोते हैं, बीमार पडते हैं, रातमें सोना हराम कर मेरा अपना हाल तो बहुत बुरा है। दफ्तरसे थका-माँदा लौटूँ, भूखके मारे बुरा हाल हो देते हैं। शरीर थकावटसे चूर है, परंतु तापमान लेनेके लिये और देखूँ कि पत्नीने अभी चूल्हेमें आग भी नहीं जलायी, जागना है, दवा वक्तपर देनेके लिये जागना है। डॉक्टरका अथवा दाल-सागमें जरूरतसे ज्यादा नमक-मिर्च छोड दी दरवाजा खटखटाना है। अब देखिये, मेरा पल-पलपर है अथवा रोटी जला दी है, तो देखिये मेरे क्रोधका पारा! बढनेवाला क्रोध! उस दिन थाली न टूटे, सेवापरायणा पत्नीका गन्दी गालियोंसे समादर न हो, तो उसका भाग्य सराहना चाहिये। मुझे दुर्बल पाकर कोई गाली दे देता है, पीट देता है। मेरा कसूर हो तब भी मुझे गुस्सा आता है, फिर बिना

िभाग ९६ कसुर यदि कोई मार बैठे तो फिर मेरा क्रोधित होना है। चिढानेपर, तिरस्कृत होनेपर मेरे क्रोधका पार नहीं रहता। स्वाभाविक ही है। मेरी शारीरिक अयोग्यतापर, मेरी जाति, वर्ण, कुल, विद्या, बुद्धि आदिपर कोई आक्षेप कर भर दे, मुझे चोट लग मतलब, जब मेरे आराममें बाधा पड़ती है, सुखोपभोगमें जानेपर, मेरे गिर जानेपर कोई हँस भर दे, मुसकरा भर कोई अड़चन आ जाती है, तो मेरा क्रोध भड़क उठता है। दे, मेरा मखौल भर उडाये, तब देखिये मेरा लाल होना। फिर वह गरमीमें उमस होनेसे हो, बाहर जाते समय तालीका गुच्छा खो जानेसे हो, जरूरतके वक्त जरूरी चीजके न कोई व्यक्ति जब मुझपर व्यंग्य कसता है, मुझपर मिलनेसे हो, समयपर बर्तन मलनेके लिये दाईके न आनेसे कार्टून बनाता है, मित्रमण्डलीमें, परिचितोंमें, सभा-सोसाइटीमें, हो, खाना बननेके पहले ही आँच चली जानेसे हो, किसी क्लब या गोष्ठीमें निरादर करता है, मजाक उडाता है, चीजके खो जानेसे हो, बच्चोंके जिद करनेसे हो, समयपर व्याजसे भी कहीं मेरी निन्दा करता है तो मेरा रोम-रोम गाढी मेहनतकी कमाई न मिलनेसे हो, परीक्षामें असफल हो क्रोधसे जलने लगता है! जानेसे हो, बरसातमें पैर फिसलकर गिर जानेसे हो, बीमार पड़ जानेसे हो, समयपर उधार गयी चीज या रकम वापस न यह मत समझ लीजिये कि सिर्फ इतनी ही बातोंपर मिलनेसे हो अथवा और ही किसी कारणसे हो। मेरे स्वार्थमें मेरा क्रोध भड़कता है। मेरे क्रोधके कारणोंकी सूची बहुत लम्बी है। जैसे— मेरे आराममें बाधा आयी नहीं कि मेरा क्रोध उबला! मेरा कोई साथी अथवा मेरे अधीन काम कर चुकनेवाला कोई व्यक्ति जब धनसम्पत्तिमें, मान-सम्मानमें मुझसे बाजी मार लेकिन, यहींतक बस नहीं। मेरे क्रोधके और भी कितने ही कारण हैं। ले जाता है, तो मेरा क्रोध फुफकार उठता है—'हैं, मैं जहाँ-मुझमें कूट-कूटकर अनेक दुर्गुण भरे पड़े हैं। मगर का-तहाँ पड़ा हूँ और यह मुझसे इतना आगे बढ़ गया !…' मैं यह नहीं चाहता कि मेरी कमजोरियोंका कोई पर्दाफाश करे! जब कोई व्यक्ति मेरे आत्मसम्मानको ठेस लगाता है, मुझे अनिद्राका रोग है, नींद नहीं आती, चिन्ताएँ आठ मेरी ख्यातिपर प्रहार करता है, दूसरोंकी दृष्टिमें मुझे पहर चौंसठ घड़ी घेरे रहती हैं और कोई दूसरा मेरे सामने गिरानेकी चेष्टा करता है, मुझे उचितसे कम आदर देता ही खर्राटेकी नींद लेता है, निश्चिन्त जीवन व्यतीत करता है अथवा किसी भी प्रकारसे मेरे अहंकारपर ठोकर मारता है, मौज-मस्तीसे जिन्दगीके दिन काटता है, यह देख मेरे क्रोधका पार नहीं रहता! है तो मेरे तावका ठिकाना नहीं रहता! मेरी पत्नी, मेरे छोटे भाई, बहन, मेरे बच्चे, मेरे में भले ही झूठ बोलता रहूँ, 'अश्वत्थामा हतो नरो अधीनस्थ कर्मचारी जब मेरी बात नहीं सुनते, मेरे वा कुंजरो' की नीति अपनाता रहूँ, पर मुझे यह बर्दाश्त आदेशोंका अक्षरश: पालन नहीं करते अथवा मेरी रुचि नहीं होता कि कोई दूसरा व्यक्ति झूठ बोले अथवा और इच्छाके विपरीत कोई काम करते हैं, तो मेरा गुस्सा असलियतपर पर्दा डाले! दर्शनीय बन बैठता है! में दुनियाभरकी खुराफातें करता रहूँ, परंतु दूसरेसे मेरी झूठी शानमें ठेस लगी नहीं, मेरी कमजोरियोंपर कोई सामान्य-सा भी अपराध बन पड़े, तो मैं उसे क्षमा किसीने उँगली उठायी नहीं कि एडीसे लेकर चोटीतक करनेकी बात भी नहीं सोच सकता! ऐसे मौकोंपर मेरा मेरा सारा शरीर क्रोधसे जल उठता है। क्रोध देखते ही बनता है! निन्दा और अपमान होनेपर, उपेक्षा और तिरस्कार **'धोबीसे बस न चला तो गदहेके कान उमेठ दिये!'**— Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma L MADE WITH LOVE BY A Vinash/Sharlinduism के क्या, बेर्ड-बर्डा की आसने डोल जीता इस तथ्यकी मेन जी-जीनसे पेकर्ड रखा है। एंप्तर्स के

संख्या ८] उत्तेजनावे	ह क्षणोंमें
*********************************	*******************************
बाबू जिस दिन मुझपर अपना ताव उतारते हैं, उस दिन मेरी	व्यंग्य किया, निन्दा की, मेरे खिलाफ कुछ कहा, कुछ
पत्नी और बच्चे उस तावके शिकार न बने तो मैं ही क्या!	किया—बस, क्रोधदेवता हाजिर!
× × ×	× × ×
अपनी बेवकूफियाँ मेरी दृष्टिमें नगण्य रहती हैं, पर	'कामात्क्रोधोऽभिजायते!'
दूसरोंकी बेवकूफियोंपर मेरा बिगड़ उठना मेरे लिये	कामसे तो क्रोध आता ही है, लोभसे भी क्रोध आता
स्वाभाविक है।	है। मोहसे भी क्रोध भड़कता है।
भले ही मेरा दृष्टिकोण गलत हो, पर वाद-विवादमें	मद और मात्सर्यसे भी क्रोधका जन्म होता है। कहा
कोई मेरे पक्षको चुनौती दे, फिर देखिये मेरा क्रोध!	नहीं जा सकता कि हमारे अन्तस्का कौन विकार कब
× × ×	क्रोधका रूप धारण कर लेगा।
बच्चे पढ़ाईमें यदि मेरी आशाके अनुरूप प्रगति न	× × ×
करें अथवा व्यवहारमें ठीक वैसा न करें, जैसा बुजुर्गोंको	उत्तेजनाके ये क्षण रात-दिनमें न जाने कितनी बार
करना चाहिये, फिर देखिये मेरा ताव। मार-मारकर उन्हें	उपस्थित होते हैं। रोज हम कितने ही लोगोंके सम्पर्कमें
उत्तू बनाये बिना मैं मान नहीं सकता!	आते हैं। सबके स्वार्थ अलग, सबके स्वभाव अलग, सबकी
× × ×	प्रकृति अलग, सबकी रुचि अलग, सबके रुझान अलग।
'टाकाय टाका बाढ़े!' किसीको क्रोधित होते देख मैं	हाथकी पाँच अँगुलियाँ जब एक-सी नहीं, तब दूसरे
भी क्रुद्ध हुए बिना नहीं रह सकता। पत्थरका जवाब	लोगोंकी तो बात ही क्या? एक पेटके जाये चार बेटे चार
पत्थरसे देनेमें मैं माहिर हूँ। ईसाका वह पर्वतवाला उपदेश	तरहके होते हैं। फिर यह आशा ही कैसे की जा सकती
मुझे फूटी आँख नहीं सुहाता कि 'कोई तुम्हारे दायें गालपर	है कि सारी दुनिया मेरी ही रुचिके अनुसार घूमेगी?
थप्पड़ मारे तो तुम उसके आगे बायाँ गाल भी कर दो!'	और जहाँ किसीने कोई बात मेरी रुचिके प्रतिकूल
× × ×	की कि मुझे क्रोध आया! मेरी इच्छाके विपरीत कुछ हुआ
अमुक व्यक्ति तुम्हारे खिलाफ ऐसा-ऐसा कह रहा	कि मैं उत्तेजित हुआ!
था—यह बात कोई मुझसे आकर कह दे, बस, असलियतका	× × ×
कुछ भी पता लगाये बिना मैं क्रोधके हाथका खिलौना बन	क्रोध जब आता है तो मेरा चेहरा लाल हो जाता है,
बैठता हूँ। बातका बतंगड़ बनते देर नहीं लगती।	भौंहें तन जाती हैं, आँखें लाल हो उठती हैं, नथुने फूल
× × ×	जाते हैं, नाक लाल हो जाती है, साँस तेजीसे चलने लगती
भले ही न्याय और सदाचारसे मैं कोसों दूर रहूँ, पर	है, जुबान बेलगाम हो जाती है, मुट्टियाँ बँध जाती हैं,
मेरे सामने कोई अन्याय और दुराचार कर तो जाय!	शरीरका रोम-रोम उत्तेजनासे भर उठता है!
अपराधीको दण्ड देनेके लिये मैं तत्काल कानूनको अपने	क्रोधके आते ही मेरी शान्ति हवा हो जाती है, विवेक
हाथमें उठा लेता हूँ!	झख मारा करता है, बुद्धिका दिवाला खिसक जाता है,
× × × ×	तन-बदनका सारा होश जाता रहता है और उस हालतमें
तात्पर्य यह कि सुबहसे शामतक और शामसे	मैं कुछ भी कर सकता हूँ।
सुबहतक एक-दो नहीं, कभी-कभी सैकड़ों ऐसे प्रसंग	क्रोधके आवेशमें मैं गाली बक सकता हूँ, व्यंग्य
उपस्थित हो जाते हैं, जब मैं उत्तेजित हो उठता हूँ, मेरी	कस सकता हूँ। स्त्री-बच्चोंपर ही नहीं, दूसरोंपर भी हाथ
शान्ति मेरा पल्ला छुड़ाकर भाग जाती है और मैं क्रोधके	उठा सकता हूँ, कोई भी कुकृत्य कर सकता हूँ, भले ही
हाथोंकी कठपुतली बन बैठता हूँ। जहाँ मेरे स्वार्थमें कोई	बादमें उसके लिये पछताना पड़े।
बाधा पड़ी, जहाँ मेरी इच्छाके प्रतिकूल कुछ हुआ, मेरे	उत्तेजनाके क्षणोंमें मैं मार-पीट, खून-कत्लतक कर
आराममें खलल पड़ा, जहाँ कोई काम बिगड़ा, जहाँ कोई	सकता हूँ। और क्या नहीं कर सकता?
चीज खराब हुई, जहाँ किसीने मारा-पीटा, गाली बकी,	x x x

िभाग ९६ क्रोधका परिणाम किसीसे छिपा नहीं। जेलोंकी स्वामी रामतीर्थने इसका बड़ा सटीक उत्तर दिया आबादी आधी भी नहीं रहती, यदि मानव क्रोधपर विजय है—'हम यह पूछते हैं कि क्या यह सच है कि 'टेढी काटैं प्राप्त कर पाता। वहाँ काम, क्रोध और लोभके ही शिकार नाहिं?' सच तो यह है कि समयपर सब कट जाती हैं, तो चारों ओर दिखायी पडते हैं। क्या सीधी और क्या टेढ़ी। केवल आगे-पीछेका भेद है। लखनऊ सेण्ट्रल जेलमें ४२ में एक सीधे-सादे कैदीसे कटनेमें सब बराबर हैं।' जब मैंने पृछा—' भाई! तुम क्यों यहाँ चले आये ? तुम तो बहत 'हाँ, अगर सचमुच अन्तर है तो यह है कि टेढी सीधे, ईमानदार और शान्त जान पड़ते हो!' तो वह बहुत लकडी काटी जाकर प्राय: जलायी जाती है, ईंधनके काम शर्माकर बोला—'क्या बताऊँ भाईजी! ससुरालमें जोरूकी आती है और सीधी लकड़ी काटी जाकर जलायी नहीं बिदा कराने गया था। उन लोगोंने उस समय उसे भेजनेसे जाती, वरं वह रंग-रोगनसे सजकर अमीरों, वृद्धों, महापुरुषों, इनकार किया। मुझे गुस्सा आ गया और मैंने गँडासा उठाकर शौकीनों, सुन्दरियोंके कर-कमलोंका दण्ड (डंडा) बनती बीबीकी ही गर्दन उड़ा दी! अब जिन्दगीभर जेल काटनी है!' है या यदि मोटी और भारी हो तो मन्दिरों, मकानोंमें शहतीरका काम देती है, स्तम्भका पद पाती है।' क्रोध अत्यन्त भयंकर मानसिक विकार है। आज 'सीधी लकडी हर प्रकारसे अपनी पहली अवस्थाकी घर-घरमें इतना लड़ाई-झगड़ा, द्वेष, घृणा और झिकझिक अपेक्षा उन्नति पाती और विकास-समन्वित होती है, जब कि टेढीको अवनित और विनाश प्राप्त होता है।' दीख पड़ती है, उसका मूल कारण यह क्रोध ही है। क्रोध प्रकट होता है तो कट्वाणीमें, तू-तू, मैं-मैं, गाली-गलौजमें, मार-पीट और कत्लमें। दबा रहता है तो अनुशासनके लिये कुछ लोग क्रोधको आवश्यक मानते घृणा और द्वेषका रूप पकड़ लेता है और मौका मिलते हैं। उनका मत है कि क्रोधके बिना नौकर ढीठ हो जायँगे। दफ्तरोंका काम ठीकसे न चलेगा। लडके बडोंका आदर न ही ज्वालामुखीकी तरह फट पडता है! बीमारियाँ तो क्रोधसे न जाने कितनी पैदा होती हैं। करेंगे। उनका कहना है कि क्रोध न किया जाय, पर इसका चिन्ता, स्नायुदौर्बल्य, रक्तचाप, मिरगी, बेहोशी, पागलपन आदि स्वाँग तो करना ही चाहिये। कारण— न जाने क्या-क्या हो जाता है क्रोधके कारण! कहते हैं, क्रोधसे सीधी उँगली घी जम्यो क्यों हूँ निकसे नाहिं। विषाक्त माताका दुध पीनेसे बच्चेकी मृत्युतक होनी सम्भव है। परंतु मैं जानता और मानता हूँ कि क्रोधका स्वाँग भी खतरेसे खाली नहीं। एक बार 'अभिमन्यु-वध' का नाटक व्यक्तिका क्रोध समाजमें फैलता है, समाजका राष्ट्रमें और राष्ट्रका सारे संसारमें। विश्वयुद्धोंका जनक क्रोध ही खेला जा रहा था। बेटा अभिमन्यु बना था, पिताको उसपर है। एटम बम, हाइड्रोजन बम आदिके भीतर हमारा यह गदाका प्रहार करना था। परंतु क्रोधके आवेशमें पिता भूल क्रोध ही तो सिमटा-सिकुड़ा बैठा है। इसके फटनेकी देर बैठा कि उसे स्वॉॅंग ही करना है। गदा-प्रहारसे 'अभिमन्य' है कि मीलोंतक सर्वनाशका ताण्डव होने लगता है। की खोपड़ी दरअसल खुल गयी। स्वाँग असलियत बन बैठा। खुनके फव्वारोंसे सारा स्टेज रँग गया। जो क्रोध इतना भयंकर है, जो क्रोध आननफानन लाखका घर खाक कर देता है, जो क्रोध जेल, कालापानी नौकरों, छात्रों और बालकों, घर-दफ्तरोंमें अनुशासन और फॉॅंसीतक पडनेके लिये विवश कर देता है, जिस लानेके लिये न क्रोधकी जरूरत है, न क्रोधके स्वाँगकी। क्रोधकी परिणति दु:ख और हाहाकारमें ही होती है, उसी दुसरोंमें अनुशासन लाना है तो पहले अपने-आपको क्रोधके विषयमें मैंने लोगोंको कहते सुना है—'क्रोधके बिना अनुशासित करिये। आपको देखकर ही दूसरे लोग भी भला संसारका काम चल सकता है ?' वे कहते हैं— अनुशासनका पालन करने लगेंगे। अति सीधे मित होइये, कछुक व्यंग मन माहिं। "Example is better than precept!" सीधी लकड़ी काटि लें, टेढ़ी काटैं नाहिं॥

लीलामयकी लीलाएँ (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) एक दिन साँवरे-सलोने व्रजराजकुमार श्रीकन्हैया-एक दिन माताने माखनचोरी करनेपर श्यामसुन्दरको लालजी अपने सूने घरमें स्वयं ही माखन चुरा रहे थे।

लीलामयकी लीलाएँ

उनकी दृष्टि मणिके खम्भेमें पड़े हुए अपने प्रतिविम्बपर पड़ी। अब तो वे डर गये। अपने प्रतिविम्बसे बोले— 'अरे भैया! मेरी मैयासे कहियो मत। तेरा भाग भी मेरे बराबर ही मुझे स्वीकार है; ले खा। खा ले, भैया!' यशोदा माता अपने लालाकी तोतली बोली सुन रही थीं। उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ, वे घरमें भीतर घुस आयीं। माताको देखते ही श्रीकृष्णने अपने प्रतिविम्बको दिखाकर 'मैया! मैया! यह कौन है? लोभवश तुम्हारा माखन चुरानेके लिये आज घरमें घुस आया है। मैं मना करता हूँ, तो मानता नहीं है और मैं क्रोध करता हूँ तो

अपने दुध-मुँहे शिशुकी प्रतिभा देखकर मैया वात्सल्य-स्नेहके आनन्दमें मग्न हो गयीं। एक दिन श्यामसुन्दर माताके बाहर जानेपर घरमें ही माखन-चोरी कर रहे थे। इतनेमें ही दैववश यशोदाजी

यह भी क्रोध करता है। मैया! तुम कुछ और मत सोचना।

मेरे मनमें माखनका तनिक भी लोभ नहीं है।'

संख्या ८]

बात बदल दी—

लौट आयीं और अपने लाड़ले लालको न देखकर पुकारने लगीं— 'कन्हैया! कन्हैया! अरे ओ मेरे बाप! कहाँ है, क्या

कर रहा है?' माताकी यह बात सुनते ही माखनचोर श्रीकृष्ण डर गये और माखन-चोरीसे अलग हो गये। फिर थोड़ी देर चुप रहकर यशोदाजीसे बोले—'मैया, री

मैया! यह जो तुमने मेरे कंकणमें पद्मराग जड़ा दिया है,

इसकी लपटसे मेरा हाथ जल रहा था। इसीसे मैंने इसे माखनके मटकेमें डालकर बुझाया था।' माता यह मधुर-मधुर कन्हैयाकी तोतली बोली

लालाको गोदमें उठा लिया और प्यारसे चूमने लगीं।

सुनकर मुग्ध हो गयीं और 'आओ बेटा!' ऐसा कहकर

झड़ी लग गयी। कर-कमलसे आँखें मलने लगे। ऊँ-ऊँ-ऊँ करके रोने लगे। गला रूँध गया। मुँहसे बोला नहीं जाता था। बस, माता यशोदाका धैर्य टूट गया। अपने

धमकाया, डाँटा-फटकारा। बस, दोनों नेत्रोंसे आँसुओंकी

आँचलसे अपने लाला कन्हैयाका मुँह पोछा और बड़े प्यारसे गले लगाकर बोलीं—'लाला! यह सब तुम्हारा ही है, चोरी नहीं है।'

ऑंगन धुल गया था। यशोदा मैयाके साथ गोपियोंकी गोष्ठी जुड़ गयी थी। वहीं खेलते-खेलते कृष्णचन्द्रकी दृष्टि चन्द्रमापर पड़ी। उन्होंने पीछेसे आकर यशोदा मैयाका घुँघट उतार लिया। और अपने कोमल करोंसे उनकी चोटी

एक दिनकी बात है—'पूर्णचन्द्रकी चाँदनीसे मणिमय

खोलकर खींचने लगे और बार-बार पीठ थपथपाने लगे। 'मैं लूँगा, मैं लूँगा'—तोतली बोलीसे इतना ही कहते। जब मैयाकी समझमें बात नहीं आयी, तब उसने स्नेहार्द्र दृष्टिसे

पास बैठी ग्वालिनोंकी ओर देखा। अब वे विनयसे, प्यारसे फुसलाकर श्रीकृष्णको अपने पास ले आयीं और बोलीं—

'लालन! तुम क्या चाहते हो, दूध!' श्रीकृष्ण—'न'। 'क्या बढ़िया दही?''ना'। 'क्या ख़ुरचन?' 'ना!' मलाई ? 'ना!' 'ताजा माखन ?' 'ना' ग्वालिनोंने कहा— 'बेटा! रूठो मत, रोओ मत। जो माँगोगे सो देंगी' श्रीकृष्णने धीरेसे कहा—'घरकी वस्तु नहीं चाहिये' और अँगुली उठाकर चन्द्रमाकी ओर संकेत कर दिया। गोपियाँ बोलीं— 'अरे मेरे बाप! यह कोई माखनका लौंदा थोड़े ही है? हाय! हाय! हम यह कैसे देंगी ? यह तो प्यारा-प्यारा हंस आकाशके सरोवरमें तैर रहा है।' श्रीकृष्णने कहा—'में भी तो खेलनेके लिये इस हंसको ही माँग रहा हूँ, शीघ्रता करो। पार जानेके पूर्व ही मुझे ला दो।'

अब और भी मचल गये। धरतीपर पाँव पीट-पीटकर और हाथोंसे गला पकड़-पकड़कर 'दो-दो' कहने लगे और पहलेसे भी अधिक रोने लगे। दुसरी गोपियोंने कहा—'बेटा! राम-राम। इन्होंने तुमको बहला दिया है। यह राजहंस नहीं है, यह तो आकाशमें ही रहनेवाला चन्द्रमा है।' श्रीकृष्ण हठ कर बैठे—'मुझे तो यही दो! मेरे मनमें इसके साथ खेलनेकी बडी लालसा है। अभी दो, अभी दो।' जब बहुत रोने लगे, तब यशोदा माताने गोदमें उठा लिया और प्यार करके बोलीं—'मेरे प्राण! न यह राजहंस है और न तो चन्द्रमा। यह है माखन ही, परंतु तुमको देनेयोग्य नहीं है। देखो, इसमें वह काला-काला विष लगा हुआ है। इससे बढ़िया होनेपर भी इसे कोई नहीं खाता है।' श्रीकृष्णने कहा—'मैया! मैया! इसमें विष कैसे लग गया?' बात बदल गयी। मैयाने गोदमें लेकर मधुर-मधुर स्वरसे कथा सुनाना प्रारम्भ किया। माँ-बेटेमें प्रश्नोत्तर होने लगे। यशोदा—'लाला! एक क्षीरसागर है।' श्रीकृष्ण—'मैया! वह कैसा है?' यशोदा—'बेटा! यह जो तुम दूध देख रहे हो, इसीका एक समुद्र है।'

श्रीकृष्ण—'मैया! कितनी गायोंने दूध दिया होगा,

यशोदा—'कन्हैया! वह गायका दूध नहीं है।'

श्रीकृष्ण—'अरी मैया! तू मुझे बहला रही है, भला

जब समुद्र बना होगा?'

बिना गायके दुध कैसे?'

यशोदा—'एक बार देवता और दैत्योंमें लड़ाई हुई। असुरोंको मोहित करनेके लिये भगवान्ने क्षीरसागरको मथा। मन्दराचलको रई बनी। वासुकि नागकी रस्सी। एक ओर देवता लगे, दूसरी ओर दानव।' श्रीकृष्ण—'जैसे गोपियाँ दही मथती हैं, क्यों मैया ?' यशोदा—'हाँ बेटा! उसीसे कालकृट नामका विष पैदा हुआ।' श्रीकृष्ण—'मैया! विष तो सॉंपोंमें होता है, दूधमें कैसे निकला?' यशोदा—'बेटा! जब शंकर भगवान्ने वही विष पी लिया, तब उसकी जो फुइयाँ धरतीपर गिर पड़ीं, उन्हें पीकर साँप विषधर हो गये। सो बेटा! भगवान्की ऐसी कोई लीला है, जिसमें दूधमेंसे विष निकला।' श्रीकृष्ण—'अच्छा मैया! यह तो ठीक है।' यशोदा—'बेटा! [चन्द्रमाकी ओर दिखाकर] यह

गायके बिना भी दूध बना सकता है।'

कोई जा नहीं सकता) है।

श्रीकृष्ण—'मैया! वह कौन है?'

यशोदा—'वह भगवान् हैं; परंतु अग (उनके पास

श्रीकृष्ण—'अच्छा ठीक है, आगे कहो।'

मक्खन भी उसीसे निकला है। इसलिये थोडा-सा विष इसमें भी लग गया। देखो, देखो, इसीको लोग कलंक कहते हैं। सो मेरे प्राण तुम घरका ही मक्खन खाओ।' कथा सुनते-सुनते श्यामसुन्दरकी आँखोंमें नींद आ Hinख्योडान क्रिड्सर्वात्म हो स्ट्रिंड निर्मा में स्ट्रिंड निर्मा में स्ट्रिंड निर्मा क्रिंड निर्मा

स्थानका मनपर प्रभाव (गोलोकवासी सन्त श्रीकेशवरामचन्द्र डोंगरेजी महाराज) मनमें बुरा विचार आता था और उस मिट्टीको छोड़ देते एक बार श्रीराम-लक्ष्मण-जानकीजी एक क्षेत्रमें थे, उस समय मनमें पवित्र भावना जग जाती। तीन-चार प्रवेश कर रहे थे। छोटी-सी पगडंडी थी। यह ऐसी भूमि थी कि इसमें आनेके बाद लक्ष्मणजीके मनमें थोड़ा दिनतक ऐसा होता रहा। लक्ष्मणजीको आश्चर्य हुआ। अन्तमें एक दिन लक्ष्मणजीने श्रीरामचन्द्रजीसे पूछा कि

होनेका कारण पूछा।

स्थानका मनपर प्रभाव

कुभाव आया। लक्ष्मणजीके मनमें विचार आया कि कैकेयीने रामको वनवास दिया है, मुझे नहीं। मुझे वनमें भटकनेकी क्या आवश्यकता है ? मैं राजाका पुत्र हूँ। मैं राजमहलमें रहकर सुख क्यों नहीं भोगूँ? मैं भाईके पीछे-पीछे चलता हूँ, परंतु बड़े भाईका मेरे ऊपर प्रेम कहाँ है?

संख्या ८]

भाभी तो बैठी रहती हैं। सारा काम तो मुझे ही करना पड़ता है। इन लोगोंका मेरे ऊपर तिनक प्रेम नहीं। इन्होंने किसी दिन मुझसे पूछा भी नहीं कि लक्ष्मण! तूने भोजन किया या नहीं ? तूने निद्रा ली या नहीं ? इनके पीछे मुझे वनमें भटकनेकी क्या आवश्यकता है? लक्ष्मणजीके मनमें श्रीसीतारामजीके प्रति ऐसा कुभाव आया। श्रीरामचन्द्रजी जान गये कि लक्ष्मणका मन आज थोडा बिगडा हुआ है। श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणजीको आज्ञा की, 'लक्ष्मण! इस क्षेत्रकी थोडी-सी मिट्टी तो ले लो।' लक्ष्मणजीने थोड़ी मिट्टी ली, उसकी पोटली बनाकर अपने साथ रख ली। यह मिट्टी जब-जब लक्ष्मणजीके पास होती, तब-तब लक्ष्मणजीके मनमें बुरा विचार आता था कि रामजीकी सेवा करनेकी मुझे क्या आवश्यकता है? मैं घर लौट जाऊँ अर्थात् अयोध्या चला जाऊँ। मेरी पत्नी उर्मिला वहाँ है। मैं वहाँ सुख भोगूँ। रामजीके पीछे-पीछे भटकनेसे मुझे कोई लाभ नहीं। लक्ष्मणजी स्नान करते समय पोटलीको अलग रख

है। मुझे संसारका कोई सुख भोगना नहीं। मुझे अपना

मिट्टीकी पोटली पास होती, उस समय लक्ष्मणजीके

जीवन सफल करना है।

देते थे। स्नान करते ही मन पवित्र हो जाता और उस समय उनके मनमें ऐसा विचार आता कि श्रीसीतारामजी तो प्रत्यक्ष परमात्मा हैं। मुझे इनकी सेवाका लाभ मिला

श्रीरामचन्द्रजीने सुन्द-उपसुन्दकी समस्त कथा सुनायी-ये दोनों सगे भाई थे। दोनोंके बीच अतिशय प्रेम था। इन दोनों राक्षसोंने उग्र तपश्चर्या की। उनके तपसे ब्रह्माजी प्रसन्न हो गये। ब्रह्माजीने कहा—'वरदान माँगो।'

'मुझे ऐसा क्यों होता है?' लक्ष्मणजीने रामजीसे ऐसा

नहीं। यह मिट्टी ही उसका कारण है। यह मिट्टी तुम

फेंक दो। जिस भूमिमें जो प्रवृत्ति होती है, उसके परमाणु

उस भूमिमें और उस भूमिके वातावरणमें रहते हैं। यह जिस क्षेत्रकी मिट्टी है, उस क्षेत्रमें बहुत वर्ष पहले सुन्द

और उपसुन्द नामके दो राक्षस रहते थे।'

रामचन्द्रजीने कहा—'लक्ष्मण! इसमें तुम्हारा दोष

दोनों भाइयोंने माँग की कि 'हमको कोई मार न सके, ऐसा वरदान दो।' ब्रह्माजीने कहा—'जिसका जन्म होता है, उसको मरना तो पड़ता ही है। तुम मरनेकी कोई

१६

दोनों भाइयोंके बीच अतिशय प्रेम था। इस कारण दोनोंने विचार किया कि हममें कोई भी दिन विरोध तो

शर्त रख लो।'

होना नहीं, वैर भी होना नहीं, इसलिये किसी भी दिन

हम एक-दूसरेको मारनेवाले हैं नहीं। इसलिये हमारे

अमर होनेका यही एक उपाय है। इस प्रकार मरनेकी

बात भी रह जायगी और कभी मरण सम्भव भी नहीं होगा। ऐसा विचार करके उन्होंने ब्रह्माजीसे माँगा कि

'हमको दूसरा कोई नहीं मार सके। हम दोनों भाइयोंके बीच किसी दिन झगडा हो तो भले ही हमारा मरण हो जाय, परंतु अन्य कोई भी हमको मार सके नहीं, ऐसा वरदान दीजिये।' ब्रह्माजीने कहा—'ऐसा ही होगा।' तपके प्रतापसे दोनों राक्षसोंकी शक्ति बहुत अधिक बढ़ गयी थी। शक्तिका दुरुपयोग करे, वही राक्षस। शक्तिका

सद्पयोग करे, वही देवता। तुम राक्षस हो या देवता हो, इस बातका तुम्हीं विचार करके निश्चय करो। प्रभुने तुमको जो कुछ शक्ति दी है, उसका तुम सदुपयोग करते

हो तो तुम देवता हो। पवित्र विचार करनेके लिये प्रभुने मन दिया है। मनमें अद्भृत शक्ति रहती है। मन जब ईश्वरके स्वरूपमें लीन होता है, तब उसकी शक्तिका विकास होता है और जब मन विषयोंमें भटकता है, तब उसकी शक्तिका

विनाश होता है। ईश्वरकी जीवके ऊपर अनन्त कृपा होती है। प्रभुने जीवको शक्तिके अलावा और भी अधिक दिया

है, परंतु जीवको उसका उपयोग करना आता नहीं।

इन राक्षस भाइयोंकी-सुन्द और उपसुन्दकी शक्ति

बहुत बढ़ गयी। तब वे इन्द्रादिक देवताओंको त्रास देने लगे। देवता ब्रह्माजीके पास गये और ब्रह्माजीसे कहा— 'आपने इनको वरदान दिया है, इसलिये ये किसीके

हाथोंसे नहीं मरते, इनको दुसरा कोई मार सकता नहीं।'

इनसे बचो और इन्हें उखाड़ फेंकनेका प्रयत्न करो-

ब्रह्माजीने युक्ति की। इन्होंने तिलोत्तमा नामकी एक

अप्सरा उत्पन्न की और तिलोत्तमासे कहा—'इन दोनों

भाइयोंमें तू वैर उत्पन्न कर। अप्सरा तिलोत्तमा सुन्द-

उपसुन्द जहाँ रहते थे, वहाँ गयी। उस सुन्दर अप्सराको

देखते ही सुन्दको ऐसा विचार हुआ कि यह

मुझको मिले, उपसुन्दको भी ऐसा विचार हुआ कि मुझको

िभाग ९६

मिले। दोनों भाइयोंमें झगड़ा होने लगा, अप्सराने कहा— ' मैं तुममें-से एकके साथ लग्न करनेको तैयार हूँ ।'

सुन्द उपसुन्दसे कहने लगा—'यह मेरी है। यह तेरी भाभी है।' उपसुन्दने कहा—'यह तेरी भाभी है, यह तो मेरी है।' 'मेरी-मेरी' कहते-कहते मारा-मारीपर आ

गये। दोनोंका मरण हो गया। श्रीरामचन्द्रजीने सुन्द-उपसुन्दकी कथा बताते हुए लक्ष्मणजीसे कहा—'इस भूमिमें वैरके संस्कार आये हुए

हैं। दो सगे भाई इस भूमिपर परस्पर युद्ध करके मरे हैं।

भूमिका असर मनके ऊपर होता है।'

भक्तिपथके पाँच बड़े काँटे

जातिविद्यामहत्त्वं च रूपं यौवनमेव च।यत्नेन परिहर्तव्यः पंचैते भक्तिकंटकाः॥ ऊँची जातिका अभिमान, विद्याका घमण्ड, धन, ऐश्वर्य और पदगौरवका महत्त्व, शरीरका सौन्दर्य और उछलती जवानी! यही पाँच काँटे हैं। [सत्संगके बिखरे मोती]

संख्या ८] तत्त्व	ज्ञान १७
<u> </u>	***********************************
साधकोंके प्रति—	ज्ञान
(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी १	गिरामसुखदासजी महाराज)
🕏 परमात्मतत्त्वका ज्ञान करण–निरपेक्ष है। इसलिये	🔅 जबतक हमारी दृष्टिमें असत्की सत्ता है,
उसका अनुभव अपने–आपसे ही हो सकता है, इन्द्रियाँ–	तबतक विवेक है। असत्की सत्ता मिटनेपर विवेक ही
मन-बुद्धि आदि करणोंसे नहीं।	तत्त्वज्ञानमें परिणत हो जाता है।
🕏 जबतक नाशवान् वस्तुओंमें सत्यता दीखेगी,	🔅 अपनेमें और दूसरोंमें निर्दोषताका अनुभव होना
तबतक बोध नहीं होगा।	तत्त्वज्ञान है, जीवन्मुक्ति है।
🕏 बोध होनेपर अपनेमें दोष तो रहते नहीं और	🔅 तत्त्वज्ञान होनेपर ज्ञानी पुरुष परिस्थितिसे रहित
गुण (विशेषता) दीखते नहीं।	नहीं होता, प्रत्युत सुख-दु:खसे रहित होता है।
🕏 जो हमारा स्वरूप नहीं है, उसका त्याग	🕸 तत्त्वज्ञान शरीरका नाश नहीं करता, प्रत्युत शरीरके
(सम्बन्ध-विच्छेद) कर दिया जाय तो जो हमारा	सम्बन्धका अर्थात् अहंता-ममताका नाश करता है।
स्वरूप है, उसका बोध हो जायगा।	🕏 तत्त्वज्ञान अर्थात् अज्ञानका नाश एक ही बार
🕏 साधकमें कोई भी आग्रह नहीं रहना चाहिये, न	होता है और सदाके लिये होता है।
द्वैतका, न अद्वैतका। आग्रह रहनेसे बोध नहीं होता।	😘 जैसा है, वैसा अनुभव कर लेनेका नाम ही 'ज्ञान'
🕏 जबतक अहम् है, तबतक तत्त्वज्ञानका अभिमान	है। जैसा है नहीं, वैसा मान लेनेका नाम 'अज्ञान' है।
तो हो सकता है, पर वास्तविक तत्त्वज्ञान नहीं हो	🕏 एक भगवतत्त्व अथवा परमात्मतत्त्व ही वास्तविक
सकता।	तत्त्व है, उसके सिवाय सब अतत्त्व हैं।
🏶 जबतक अपनेमें राग-द्वेष हैं, तबतक तत्त्वबोध	🔅 मिलनेवाली प्रत्येक वस्तु बिछुड़नेवाली होती है,
नहीं हुआ है, केवल बातें सीखी हैं।	पर जो नित्यप्राप्त परमात्मतत्त्व है, वह कभी किसी
比 तत्त्वज्ञान होनेमें कई जन्म नहीं लगते, उत्कट	अवस्थामें भी नहीं बिछुड़ता, चाहे हमें उसका अनुभव
अभिलाषा हो तो मिनटोंमें हो सकता है, क्योंकि तत्त्व	हो अथवा न हो।
सदा-सर्वदा विद्यमान है।	🕏 परमात्मतत्त्वका वर्णन नहीं होता, प्रत्युत अनुभव
🍁 तत्त्वज्ञान अभ्याससे नहीं होता, प्रत्युत अपने	होता है।
विवेकको महत्त्व देनेसे होता है। अभ्याससे एक नयी	🕏 परमात्मतत्त्वके सिवाय अन्यकी जितनी भी
अवस्था बनती है, तत्त्व नहीं मिलता।	स्वीकृति है, उतना ही अज्ञान है।
比 जबतक तत्त्वज्ञान नहीं हो जाता, तबतक सब	🔅 सम्पूर्ण देश, काल, क्रिया, वस्तु, व्यक्ति, अवस्था,
प्राणी कैदी हैं। कैदीका लक्षण है—पापकर्म करे अपनी	परिस्थिति, घटना आदिका अभाव होनेपर भी जो शेष
मरजीसे और दु:ख भोगे दूसरेकी मरजीसे।	रहता है, वही परमात्मतत्त्व है।
🔅 'मैं ब्रह्म हूँ'—यह अनुभव नहीं है, प्रत्युत	🖈 वास्तवमें भगवान् भी विद्यमान हैं, गुरु भी
अहंग्रह-उपासना है। इसलिये तत्त्वज्ञान होनेपर 'मैं ब्रह्म	विद्यमान हैं, तत्त्वज्ञान भी विद्यमान है और अपनेमें
हूँ '—यह अनुभव नहीं होता।	योग्यता और सामर्थ्य भी विद्यमान है। केवल नाशवान्
🏶 तत्त्वज्ञान होनेपर काम-क्रोधादि विकारोंका अत्यन्त	सुखकी आसक्तिसे ही उनके प्रकट होनेमें बाधा लग
अभाव हो जाता है।	रही है।
	>

'तुलसी कथा रघुनाथ की' तुलसी-जयन्तीपर विशेष-(जयदीप सिंह) श्रीरामचरितमानसकी रचनाके विषयमें गोस्वामीजी

भारतीय संस्कृति 'वसुधैव कुटुम्बकम्' और 'सर्वे भवन्तु सुखिनः ' का उद्घोष करती है। संसारके प्राणिमात्रका बताते हैं कि श्रीमहादेवजीने इसको रचकर अपने

मंगल हो-यह उसका मूल स्वर है। इस आधारपर यदि समीक्षा की जाय तो गोस्वामी तुलसीदासजीद्वारा विरचित श्रीरामचरितमानस भारतीय संस्कृतिका प्रतिनिधि ग्रन्थ है। मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम इस ग्रन्थरत्नके नायक हैं। उनके गुण-समूह जगत्का मंगल करनेवाले और भुक्ति, मुक्ति, धर्म और परम धामको देनेवाले हैं—

(रा०च०मा०१।३२।२) जगज्जननी भगवती जनकनन्दिनी श्रीसीताजी, जो नारियोंकी आदर्श हैं, वे इस ग्रन्थकी नायिका हैं। इस ग्रन्थमें उनका महान् चरित वर्णित है। वे सृजन, पालन

जग मंगल गुनग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के।।

और संहार करनेवाली महाशक्ति तो हैं ही, साथ ही वे सम्पूर्ण मंगलमय कार्योंकी विधात्री (सर्वश्रेयस्करी) हैं-उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।

सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्॥ (रा०च०मा० १। मंगलाचरण श्लोक ५)

गोस्वामीजी इस मंगलमयी रामकथाके विषयमें

जगत्का कल्याण करनेवाली रामकथारूपी उत्तम वस्तुका वर्णन किया गया है, अत: वर्ण्य-विषयके आधारपर मेरी

कहते हैं कि मेरी कविता अवश्य ही भद्दी है, परंतु इसमें

कविता भी अच्छी ही समझी जायगी-भनिति भदेस बस्तु भिल बरनी। राम कथा जग मंगल करनी॥ (रा०च०मा० १।१०।१०)

अन्यत्र वे कहते हैं कि मेरे द्वारा विरचित इस ग्रन्थमें श्रीरघुनाथजीका उदार नाम है, जो अत्यन्त पवित्र

है, वेद-पुराणोंका सार है, मंगलका भवन और अमंगलोंको हरनेवाला है, जिसे पार्वतीसहित भगवान् शिवजी सदा जपा करते हैं-

तातें

मनमें रखा था और सुअवसर पाकर इसे पार्वतीजीसे

कहा। इसीसे शिवजीने इसको अपने हृदयमें देखकर और प्रसन्न होकर इसका सुन्दर 'रामचरितमानस' नाम रखा-

रचि महेस निज मानस राखा। पाइ सुसमउ सिवा सन भाषा।। बर । धरेउ नाम हियँ हेरि हरषि हर ॥ रामचरितमानस (रा०च०मा०१।३५।११-१२) इस रामकथाके आदिवक्ता भगवान् शिव हैं, सब

लोगोंका हित करनेके लिये पार्वतीजीने इसे पूछा था-कथा जो सकल लोक हितकारी। सोइ पूछन चह सैलकुमारी।। (रा०च०मा०१।१०७।६)

इस प्रश्नके उत्तरमें शिवजी कहते हैं, श्रीरामजीकी कथा जगतुको पवित्र करनेवाली गंगाजीके समान है। तुम्हारा श्रीरघुनाथजीके चरणोंमें अनुराग है, तुम्हारा यह

प्रश्न तो जगत्के कल्याणके लिये है-पुछेहुँ रघुपति कथा प्रसंगा। सकल लोक जग पावनि गंगा॥

तुम्ह रघुबीर चरन अनुरागी। कीन्हिहु प्रस्न जगत हित लागी॥ (रा०च०मा०१।११२।७-८) Hinduism Discord Server, https://dsc.qg/dharma sh.MADF WHTHLEDVF-BY Ayinash Sh.

एहि महँ रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुरान श्रुति सारा॥ मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी।।

'तुलसी कथा रघुनाथ की' संख्या ८] 'कलिमलहरनि' अर्थात् कलिके दोषोंका हरण करनेवाली दहन राम गुन ग्राम जिमि इंधन अनल प्रचंड॥ भी है। इसमें श्रीरघुनाथजीका सुन्दर यश वर्णित है और (रा०च०मा०१। ३२क) यह गंगाजी तथा महादेवजीके शरीरपर लगी भस्मकी श्रीरामकथा भारतवर्षके आदर्श स्वरूपकी कथा है। इसमें आदर्श राजा, आदर्श प्रजा, आदर्श परिवार, भाँति स्मरणमात्रसे पवित्र करनेवाली है-आदर्श भातृप्रेम, आदर्श मित्र और आदर्श सेवकका मंगल करिन कलिमलहरिन तुलसी कथा रघुनाथ की। सम्यक् रूपसे दिग्दर्शन कराया गया है। भक्ति, ज्ञान, गति कूर कविता सरित की ज्यों सरित पावन पाथ की।। प्रभु सुजस संगति भनिति भिल होइहि सुजन मन भावनी। त्याग, वैराग्य और सदाचारकी शिक्षा देनेवाले अनेक प्रसंग इसमें गुम्फित हैं। इस ग्रन्थरत्नमें जन-मानसको भव अंग भूति मसान की सुमिरत सुहावनि पावनी॥ काकभुशुंडिजी कलियुगका वर्णन करते हुए कहते अपनी प्रत्येक समस्याका समाधान मिल जाता है, हैं—हे पक्षिराज गरुड़जी! कलियुगमें कपट, हठ (दुराग्रह), इसलिये यह गरीब-अमीर, शिक्षित-अशिक्षित, गृहस्थ-दम्भ, द्वेष, पाखण्ड, मान, मोह एवं काम आदि षड्रिप् संन्यासी, स्त्री-पुरुष, बालक-वृद्ध—सभीमें अत्यन्त और मद ब्रह्माण्डभरमें छा जाते हैं-लोकप्रिय है। इस ग्रन्थरत्नने भारतवर्ष विशेष रूपसे उत्तर सुनु खगेस कलि कपट हठ दंभ द्वेष पाषंड। भारतका बड़ा उपकार किया है। रीति, नीति, आचरण, मान मोह मारादि मद ब्यापि रहे ब्रह्मंड॥ व्यवहार-सब बातोंमें मानो गोस्वामीजी ही हिन्दू (रा०च०मा० ७। १०१क) रामकथा कलियुगके उपर्युक्त समस्त दोषोंका शमन प्रजामात्रके पथ-प्रदर्शक हैं। प्रत्येक अवसरपर उनकी करनेवाली है। यह पाप, सन्ताप और शोकका नाश चौपाइयाँ उद्धृत की जाती हैं और जन-साधारणके लिये धर्मशास्त्रका काम देती हैं। इस ग्रन्थने न करनेवाली तथा इहलोक और परलोकमें प्रिय करनेवाली है। यह विचार (ज्ञान)-रूपी राजाके शूरवीर मन्त्रीकी जाने कितनोंको डूबनेसे बचाया, कितनोंको कुमार्गपर भाँति और लोभरूपी अपार समुद्रको सोखनेके लिये जानेसे रोका, कितनोंके निराशामय जीवन-मन्दिरमें अगस्त्यमुनिकी भाँति है। भक्तजनोंके मनरूपी वनमें आशाका प्रदीप प्रज्वलित किया, कितनोंको घोर पापसे बसनेवाले काम, क्रोध और कलियुगके पापरूपी बचाकर पुण्य-संचयमें लगाया, कितनोंको धर्म-पथपर डगमगाते हुए चलनेमें सहारा देकर हाथियोंको मारनेके लिये यह रामकथा सिंह-शावककी भाँति है और दरिद्रतारूपी दावानलको बुझानेके लिये सँभाला और आज भी सँभालता चला आ रहा है तथा आगे आनेवाली पीढ़ियोंके लिये भी यह ग्रन्थरत्न कामनाको पूर्ण करनेवाला मेघ है-मार्गदर्शक रहेगा। समन पाप संताप सोक के। प्रिय पालक परलोक लोक के।। सचिव सुभट भूपति बिचार के। कुंभज लोभ उद्धि अपार के।। अन्तमें बेनी कविके शब्दोंमें— काम कोह कलिमल करिगन के। केहरि सावक जन मन बन के।। बेदमत सोधि, सोधि-सोधि के पुरान सबै अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामद घन दारिद दवारि के॥ संत औ असंतन को भेद को बतावतो। (रा०च०मा०१।३२।५-८) कपटी कुराही कूर कलि के कुचाली जीव श्रीरामजीके गुण-समूह कुमार्ग, कुतर्क, कुचाल कौन रामनामहू की चरचा चलावतो॥ और कलियुगके कपट, दम्भ और पाखण्डको जलानेके 'बेनी' कवि कहै मानो-मानो हो प्रतीति यह लिये वैसे ही हैं, जैसे ईंधनके लिये प्रचण्ड अग्नि पाहन-हिये में कौन प्रेम उपजावतो। होती है-भारी भवसागर उतारतो कवन पार कुपथ कुतरक कुचालि कलि कपट दंभ पाषंड। जो पै यह रामायन तुलसी न गावतो॥

सफल राजनीतिज्ञ भगवान् श्रीकृष्ण
(श्रीवासुदेवजी शर्मा)

महाभारतके युद्धमें जो विजयश्री पाण्डवोंको प्राप्त उचित समझें, देनेका प्रस्ताव रखा। दुर्योधन, जो बड़ा हुई, उसका सम्पूर्ण श्रेय तत्कालीन महान् राजनीतिज्ञ चतुर राजनीतिज्ञ था, समझ गया कि इन गाँवोंके माँगनेसे

महाभारतके युद्धमें जो विजयश्री पाण्डवोंको प्राप्त उचित समझें, देनेका प्रस्ताव रखा। दुर्योधन, जो बड़ा हुई, उसका सम्पूर्ण श्रेय तत्कालीन महान् राजनीतिज्ञ चतुर राजनीतिज्ञ था, समझ गया कि इन गाँवोंके माँगनेसे भगवान् श्रीकृष्णको ही है। महाभारतका सारा इतिहास यह अभिप्राय है कि कौरव सदैव पाण्डवोंके आश्रित रहें श्रीकृष्णकी राजनीतिज्ञतासे ओतप्रोत है। यह बात भी और वैमनस्यका भी अन्त न हो; क्योंकि ये चारों स्थान मानी हुई है कि श्रीकृष्ण-जैसे कुशल राजनीतिज्ञ कौरवराज्यकी सीमा बन जायँगे और पाण्डवोंको अपने

मानी हुई है कि श्रीकृष्ण-जैसे कुशल राजनीतिज्ञ अभीतक प्रकाशमें नहीं आये हैं। जिन राजनीतिज्ञोंको आप देख रहे हैं, उनकी राजनीति श्रीकृष्णकी राजनीतिपर ही अवलम्बित है अथवा यों किहये कि उनकी राजनीति उक्त राजनीतिका अनुकरणमात्र है। महाभारत-कालका संक्षिप्त विवरण श्रीकृष्णकी राजनीतिज्ञताके दिग्दर्शनार्थ निम्न पंक्तियोंमें प्रस्तुत है— जब पाण्डव अपने वनवासकी अवधि समाप्त कर चुके तो उनके पक्षके राजाओंने एक सभा की। उसमें

चुके तो उनके पक्षके राजाओंने एक सभा की। उसमें बहुत सोच-विचारके बाद यह निश्चय हुआ कि पाण्डवोंने जिस उत्तम ढंगसे अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया है, वह प्रशंसनीय है और अब उनका राज-पाट उन्हें मिलना चाहिये; क्योंकि वनवासकी अविध पूरी हो

गयी है। परंतु दुर्योधनसे राज-पाट वापस प्राप्त होनेकी आशा बहुत कम है, सम्भव है इसके लिये युद्ध करना पड़े, अतएव एक दूत तो कौरवोंकी सभामें हस्तिनापुर भेजा जाय और एक उन राजाओंके पास भेजा जाय जो किसी कारणवश सभामें उपस्थित नहीं हो सके हैं।

उनसे यह भी निवेदन कर दिया जाय कि आवश्यकता पड़नेपर वे लोग पाण्डवोंका ही पक्ष लें और यथाशक्ति उनकी सहायता करें; क्योंकि वे धर्म तथा न्यायके लिये लड़ रहे हैं। कौरवोंकी सभामें हस्तिनापुर जाने और इस झगड़ेके

निबटानेका भार भगवान् श्रीकृष्णको सौंपा गया; क्योंकि यह सभी जानते थे कि इस कार्यको उनके अतिरिक्त अन्य कोई भी करनेमें समर्थ नहीं है। जब श्रीकृष्ण कौरवोंकी राजसभामें पहुँचे तो उन्होंने कौरवोंको अनेक प्रकारसे समझाया और पाण्डवोंको केवल इन्द्रप्रस्थ,

वृकप्रस्थ, जयंत, वारणावत तथा एक अन्य गाँव, जो

आर वमनस्यका भा अन्त न हा; क्याकि य चारा स्थान कौरवराज्यकी सीमा बन जायँगे और पाण्डवोंको अपने प्रति किये गये व्यवहारकी सदा स्मृति दिलाते रहेंगे। अतएव दुर्योधनने इस प्रस्तावको अस्वीकार करते हुए

भाग ९६

श्रीकृष्णको स्पष्ट उत्तर दे दिया कि इन गाँवोंकी तो क्या, मैं सूईकी नोकके बराबर भी भूमि बिना युद्धके न दूँगा। यदि कुछ बाहुबलका भरोसा हो तो रणभूमिमें भाग्यकी परीक्षा कर लें।

ओरसे खुल्लमखुल्ला युद्धकी तैयारी होने लगी। कौरवोंकी ग्यारह अक्षौहिणी और पाण्डवोंकी सात अक्षौहिणी सेना कुरुक्षेत्रके लम्बे–चौड़े मैदानमें आ उतरी। श्रीकृष्ण अर्जुनके रथवान् बने। उन्होंने अर्जुनके रथको उस समय विपक्षी सेनाका अनुमान लगानेके अभिप्रायसे बीचमें ले जाकर खड़ा कर दिया। जब अर्जुनने रणभूमिमें युद्ध करनेकी इच्छासे एकत्रित अपने मामा, चाचा, दादा, गुरु,

श्रीकृष्ण असफल हो वहाँसे लौट आये और दोनों

विजयकी कामना नहीं है, जिसे अपने सम्बन्धियोंका खून बहाकर प्राप्त किया जाय, मैं नहीं लड़ूँगा, आप मेरा रथ यहाँसे ले चिलये।' जब श्रीकृष्णने अर्जुनकी ऐसी दशा देखी तो सोचा कि यह तो बना-बनाया काम बिगड़ा जा रहा है। अत: वे अर्जुनको समझाने लगे। 'वीरश्रेष्ठ अर्जुन! प्रत्येक मनुष्यको चाहिये कि

वह अपना कर्तव्य-पालन करे। कर्तव्य-पथसे एक पग

वस्त्रोंको उतारकर नये वस्त्र पहन लेते हैं, उसी प्रकार

मित्र और भाई आदि सम्बन्धियोंको देखा तो उसे

आत्मग्लानि हुई और उसने श्रीकृष्णसे कहा—'मुझे ऐसी

क भी इधर-उधर होना उचित नहीं है, कर्तव्य-पालन करते

प्य समय हानि-लाभ और जीवन-मरणका विचारतक मनमें
क नहीं आने देना चाहिये। हमारा कर्तव्य केवल कर्म करना
थ, है। फल परमात्माके हाथ है। जिस प्रकार हम पुराने

संख्या ८] सफल राजर्न	गीतिज्ञ	भगवान् श्रीकृष्ण २१
"*********************	55 55 55 <u>55</u>	**********************************
यह मिट्टीका चोला शरीर बार-बार बदलता रहता	है।	उन्होंने बताया कि 'मेरी प्रतिज्ञा है कि स्त्री अथवा स्त्रीके
आत्मा तो अमर है, उसे न तो कोई शस्त्र काट सव		समान रूपवाले व्यक्तिके आनेपर मैं उसके साथ युद्ध
है, न आग जला सकती है, न जल गला सकता है 🤅	और	नहीं करूँगा और उसी समय अर्जुनद्वारा मृत्युको प्राप्त
न पवन सुखा सकता है। अर्जुन! तुम क्षत्रिय हो 🤅	और	होऊँगा।'
इस समय युद्धक्षेत्रमें खड़े हो। तुम्हारा कर्तव्य धर्मः	युद्ध	दसवें दिन बड़ा घमासान युद्ध हुआ। पाण्डवोंने
करना है। सच्चे शूरमाओंकी तरह विजय पाओगे	तो	उस समय शिखण्डी नामके एक सैनिकको, जो पहले
राज्य-सुख भोगोगे और रणमें वीरगतिको प्राप्त होने	नेपर	स्त्री था और फिर योनिपरिवर्तन होनेसे पुरुष हो गया था,
स्वर्गके अधिकारी बन जाओगे। अब सब प्रकार	रकी	भीष्मके सामने खड़ा कर दिया। भीष्मजीने अपने
चिन्ताएँ, शंकाएँ और संशय मनसे निकाल डालो।	उठो	प्रतिज्ञानुसार हथियार डाल दिये। अर्जुनने, जो पहलेसे ही
और पुरुषसिंहकी भाँति अपना कर्तव्य-पालन करो	۱,	शिखण्डीके पीछे छिपकर खड़ा हो गया था, अवसर
गीताके इस उपदेशका अर्जुनपर आश्चर्यज	नक	प्राप्तकर पितामहको बाणोंकी सेजपर सुला दिया।
प्रभाव पड़ा और वह युद्ध करनेके लिये तैयार हो ग	ाया।	भीष्मपितामहके बाद ग्यारहवें दिन कौरवोंकी कमान
धृष्टद्युम्न पाण्डवोंकी सेनाके सेनापति बने और कौरव	वीय	द्रोणाचार्यको सौंपी गयी। उन्होंने रणमें अपनी कुशलताका
सेनाकी कमान भीष्मपितामहने सँभाली। दोनों ओ	ोरसे	परिचय भली प्रकार दिया, युधिष्ठिरको पकड़नेकी चालें
डटकर युद्ध होने लगा। पलमात्रमें खूनकी नदियाँ	बह	चली जाने लगीं। पाण्डवोंके विनाशके लिये एक अभेद्य
चलीं, दसों दिशाएँ शस्त्रोंकी झनकारसे गूँज उ	ठीं।	व्यूहरचना की गयी, इसके सम्बन्धमें सिवा अर्जुनके
भीष्मजी पाण्डवोंकी सेनाका संहार गाजर-मूलीकी त	तरह	अन्य सब अनभिज्ञ थे। हाँ, वीर अभिमन्यु कुछ जानता
करते हुए अपनी अपूर्व वीरताका परिचय देने लगे।	इस	था, अभिमन्युकी अवस्था उस समय १६ वर्षकी थी,
प्रकार युद्ध होते हुए नौ दिन व्यतीत हो गये ः	और	अर्जुनको कौरव लड़ते-लड़ते जान-बूझकर मोर्चेसे दूर
९०,००० पाण्डवोंके महारथी नष्ट हो गये। श्रीकृष	ष्णने	ले गये थे। उनकी अनुपस्थितिमें अभिमन्यु व्यूह भेदकर
जब यह देखा तो सोचा कि इस प्रकार काम	नहीं	भीतर घुस गया; किंतु अकेला वीर बालक कई
चलेगा। कोई युक्ति पितामहको समाप्त करनेकी सो	चनी	योद्धाओंके बीचमें फँस जानेके कारण वीरगतिको प्राप्त
चाहिये। आखिर उपाय सोच ही लिया और तदनु	सार	हुआ। इस समाचारको सुनकर पाण्डव बड़े दुखी हुए
युधिष्ठिरको भीष्मजीके पास भली प्रकार सिखा-पढ़ा	ाकर	और उसी समय अर्जुनने जयद्रथ और श्रीकृष्णने द्रोणाचार्यको
भेज दिया। युधिष्ठिरने पहुँचते ही शिष्टाचारके अनु	सार	समाप्त करनेकी प्रतिज्ञा की। उधर अर्जुनने जयद्रथका
पितामहको प्रणाम किया। पितामहने आशीर्वाद दिया	कि	वध कर दिया। इधर श्रीकृष्णने युधिष्ठिरसे कहा कि
'विजय हो।' युधिष्ठिरको अवसर मिल गया। उन	होंने	आचार्यका अधिक समयतक रहना हमारे लिये खतरनाक
कह ही तो डाला कि 'पितामह! आप तो पाण्डवो	ोंकी	है, यदि आप सहायता करें तो काम बन सकता है।
सेनाका संहार करनेपर तुले हुए हैं। अबतक ९०,०	000	युधिष्ठिरने कहा 'वह क्या' तो श्रीकृष्णने कहा कि
वीर नष्ट कर डाले हैं और न मालूम कितने करेंगे। ि	फिर	आचार्यके पूछनेपर आप केवल इतना कह दें कि
बताइये, आपके होते हुए विजय कैसे सम्भव है ?'	यह	'अश्वत्थामा हतो नरो वा कुञ्जरो वा।' पहले तो
सुनकर भीष्म मुसकराये और युधिष्ठिरसे पूछा	कि	युधिष्ठिरने धर्मका राग अलापा, परंतु जब श्रीकृष्णने
'आखिर चाहते क्या हो ?' युधिष्ठिरने कहा 'महारा	ाज!	कहा कि 'आप धर्म- धर्म क्या कहते हैं, धर्म वह है,
हमें वह उपाय बतला दीजिये, जिससे आपकी म	मृत्यु	जो मैं कहता हूँ।' यह सुनकर युधिष्ठिर चुप हो गये
हो।' चूँिक भीष्मजी प्रतिज्ञाबद्ध हो चुके थे। ३	अत:	और प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। इधर भीमने अश्वत्थामा

भाग ९६ गया। आशा निराशामें बदल गयी। वह निरुपाय हो नामक हाथीको मारकर यह अफवाह फैलवा दी कि अश्वत्थामा मारा गया। आचार्यजीने यह प्रतिज्ञा कर युद्धक्षेत्रसे भाग एक जलाशयमें जा छिपा। पाण्डव भी रखी थी कि जब मैं अपने पुत्रकी मृत्युका समाचार सुन पता लगाते हुए उस जलाशयपर आ पहुँचे। वहाँ लूँगा, उस समय युद्ध नहीं करूँगा। जब उन्होंने इस पहुँचकर नाना प्रकारसे दुर्योधनको धिक्कारने लगे कि, समाचारको सुना तो इसकी पुष्टि युधिष्ठिरसे करानी 'इस प्रकार कायरोंकी तरह भागकर छिप जाना वीरोंका काम नहीं है, यदि तुम सबके साथ लड़नेमें अपनेको चाही; क्योंकि उस समय यह प्रसिद्ध था कि युधिष्ठिर कभी झूठ नहीं बोलते, अत: पूर्वयोजनानुसार युधिष्ठिरने अशक्त समझते हो तो हममेंसे किसी एकसे लड़कर अपना राज्य ले लो।' दुर्योधनने जब यह सुना तो निकल कहा कि 'अश्वत्थामा हतो नरो वा कुञ्जरो वा।' आचार्यने 'अश्वत्थामा हतो' इतना ही सुना, अन्तके आया। वह बड़ा चतुर राजनीतिज्ञ था। उसने आते ही शब्द पाण्डवोंद्वारा की गयी शंखध्वनिके बीच विलीन हो कहा कि 'मैं राजा हूँ और राजाका युद्ध राजाके साथ गये। इस प्रकार अपने पुत्रकी मृत्युका समाचार सुनकर ही हो सकता है, अत: पाण्डवोंका जो राजा हो, वह मुझसे लड़े।' जब युधिष्ठिरने यह सुना तो कुछ घबराये; आचार्यजीने युद्ध करना बन्द कर दिया। उसी समय परंतु श्रीकृष्णके धैर्य बँधानेपर शान्त हुए। श्रीकृष्णने धृष्टद्युम्नने द्रोणाचार्यका सिर काट डाला। कहा कि 'आप दुर्योधनसे कह दीजिये कि हमने भीमको द्रोणाचार्यके बाद कौरवोंकी सेनाका प्रधान नायक कर्ण हुआ। कर्ण और अर्जुन दोनों बराबरके योद्धा थे। अपना राजा बना दिया है, अतः तुमको भीमसे लड़ना दोनों योद्धा जब युद्धरत थे, उसी समय दैवी घटना हो होगा।' युधिष्ठिरने इसी प्रकार दुर्योधनसे कह दिया। दुर्योधनने कहा कि 'आप जो कहते हैं वह ठीक है; परंतु गयी कि कर्णके रथका पहिया पृथ्वीमें धँस गया। कर्णने मेरे विश्वासके लिये आप सब मिलकर मेरे सामने अपने अर्जुनसे कहा कि देखो, मैं अपने रथका पहिया निकाल लूँ, उसके बाद फिर युद्ध होगा। अर्जुन इससे सहमत हो राजाको प्रणाम कर लें।' युधिष्ठिर फिर घबराये। तब गया; परंतु श्रीकृष्णजी इस बातको जानते थे कि कर्णको श्रीकृष्णभगवान्ने फिर उन्हें समझाया कि इसमें घबरानेकी हराना अर्जुनके वशका नहीं है। अर्जुनसे कहने लगे कि कौन-सी बात है। क्षत्रिय अपने शस्त्रोंको प्रणाम करते 'इस समय कर्णका सिर काटनेका अवसर है, अत: ही हैं। सब भाई आपको छोडकर भीमको प्रणाम करें अपना काम कर।' अर्जुनने इसे सुनकर कहा—'महाराज! और आप चूँकि बड़े हैं, इसलिये भीमकी गदाको प्रणाम यह तो अधर्म है।' श्रीकृष्णने कहा—' अधर्म कुछ नहीं करें, दुर्योधन यही समझेगा कि सबने भीमको प्रणाम कर है। शत्रुको जब मौका मिले मार दे। यदि इस समय तुने लिया। अत: युधिष्ठिरने वैसा ही किया। दुर्योधनको देर की, तो फिर कर्णको परास्त करना तेरे लिये असम्भव विश्वास हो गया और भीमके साथ गदायुद्ध करना है।' अर्जुनने अपने सखा श्रीकृष्णकी बात मानकर बात-स्वीकार कर लिया। दोनोंमें गदायुद्ध प्रारम्भ हो गया, की-बातमें कर्णका सिर धड़से अलग कर दिया। युद्ध करते हुए पर्याप्त समय हो गया; परंतु कोई हार कर्ण अपने प्राण गवाँ चुका था। युद्ध होते हुए नहीं मान रहा था। भगवान् श्रीकृष्णने भीमको थका सत्तरह दिन हो गये थे, अठारहवाँ दिन था, शल्य अनुभवकर उसके हार जानेकी शंकासे जाँघमें गदा मारनेका इशारा किया। भीमने तदनुसार गदाके प्रहारसे कौरवोंका सेनापति था। युधिष्ठिरने शल्यको मार डाला। कर्णके दोनों पुत्र भी लड़ाईमें मारे गये। इस समाचारको जाँघ तोड़ डाली। जंघाके टूटते ही दुर्योधन धराशायी हो सुनकर दुर्योधन बडा दुखी हो चिन्तामग्न हो गया। उसी गया। उस समय कुछने इसका विरोध किया; क्योंकि गदा-युद्धमें कमरसे ऊपर प्रहार करनेका नियम है, समय किसीने आकर शकुनिकी मृत्युकी सूचना दी, जिसे सुमिक्रिपमंद्राकुर्मिक्रिक्ट रहार्य हेला प्लेहिंग्साम्बः / सिङ्गत्वव्यस्य वस्त्राक्त्रेत्रं मिक्षे प्रहित्र । सिस् L श्रीशृक्त व स्वर्धान्त्र प्रतिक्षान्त्र व स्वर्धान्त्र स्वर्यान्त्र स्वर्धान्त्र स्वर्धान्त्र स्वर्धान्त्र स्वर्धान्त्र स्वर्धान्त्र स्वरत्य स्वर्धान्त्र स्वर्धान्त्र स्वर्यान्त्र स्वर्धान्त्र स्वर्यान्त्र स्वर्यान्त्र स्वर्यान्त्र स्वर्यान्त्र स्वर्यान्य स्वरत्य स्वर्यान्त्र स्वर्यान्त्र स्वर्यान्य स्वरत्य स्वर्यान्य स्वर्यान्य स्वरत्य स्वर्यान्य स्वर्यान्य स्वरत्य स्वर्यान्य स्वर्यान्य स्वरत्य स्वरत्य स्वरत्य स्वरत्य स्वरत्य स्वर्यान्य स्वरत्य स्वरत्य स्वरत्य स्वरत्य स्वयत्य स्वयत्य स्वयत्य स्वयत

विजयमाल पाण्डवोंको पहनायी। इसी नीतिका अवलम्बनकर समाधान इस प्रकार किया कि 'जब द्रौपदीको सभाके बीचमें पकडवा मँगाकर दुर्योधनने अपनी जाँघ दिखाकर हिन्द्-धर्म-रक्षक वीर शिवाजीने मुसलमानी सल्तनतको

> तहस-नहस कर डाला था। नेताजी श्रीसुभाषचन्द्र बोस बाबने भी प्राय: इसी नीतिसे काम लिया था।

> पाठक घटनाओंका मिलान करनेपर स्वयं ही इसको

कालापानीसे मृत्यु श्रेयस्कर है

—— कालापानीसे मृत्यु श्रेयस्कर है क्रान्ति-गाथा— सन् १८५७ के गदरके समयकी कथा है। हैदराबादके समीप ही जेरापुर नामकी एक छोटी-सी रियासत

अनुभव करेंगे।

उसपर बैठनेका इशारा किया था, उस समय भीमने

दुर्योधनकी जंघा तोडनेकी सबके सामने प्रतिज्ञा की थी।

इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्णकी राजनीतिज्ञताने

अतः उसने उस प्रतिज्ञाको पूरा किया है।'

संख्या ८]

थी। वहाँका राजा बहुत छोटी उम्रका था और वह विप्लवकारियोंसे मिला हुआ था। उसने अँगरेजोंके साथ लड़नेके लिये अरब और रोहिला-पठानोंकी एक फौज तैयार की थी।

सन् १८५८ ई० की फरवरीमें राजा हैदराबाद आया था। इसकी सूचना मिलते ही निजामके स्वामिभक्त वजीर सालारजंगने तुरन्त उसको गिरफ्तार करके अँगरेजोंको सौंप दिया।

इस बालक राजाकी गिरफ्तारीका वृत्तान्त अत्यन्त प्रशंसनीय और वीरोचित है। कर्नल मेटोज टेलर

नामक एक अँगरेज अधिकारीके साथ राजाका बड़ा प्रेम था। राजा उन्हें 'अप्पा' कहता था। जेलखानेमें मेटोज

टेलरने राजासे मिलकर उससे दुसरे विप्लवकारियोंके नाम पुछे। टेलर इस प्रसंगपर लिखते हैं कि राजाने

गर्वसे उत्तर दिया—'नहीं अप्पा! मैं उनके नाम कभी नहीं बताऊँगा। कदाचित् मैं अपने प्राणोंके लिये भीख माँगूँगा—ऐसी मुझे आशा हो, यह मत समझियेगा। पर अप्पा! जैसे मैं दूसरेकी दयापर कायरकी तरह जीना

नहीं चाहता, वैसे ही मैं अपने देशबन्धुओं के नाम भी प्रकट नहीं कर सकता। कर्नल मेटोज एक दिन फिर राजाके पास गये। उन्होंने बालक राजासे कहा—'तुम यदि दूसरोंके नाम बता दोगे तो तुम्हें क्षमा कर दिया

जायगा।' राजाने उत्तर दिया—'×××× अप्पा साहेब! जब मैं मृत्युके मुखमें जानेकी तैयारी कर रहा हूँ, तब क्या मैं विश्वासघात करके अपने देशवासियोंके नाम आपको बतला दुँ ? नहीं, नहीं, तोप या कालापानी—

ये सब मेरे लिये इतने भयंकर नहीं हैं, जितना भयंकर विश्वासघात है!' कर्नल टेलरने राजासे कहा—'तुमको प्राणदण्ड दिया जायगा।' राजाने जवाब दिया—'अप्पा! मेरी

एक प्रार्थना है, मुझे फाँसीपर मत चढ़ाइयेगा। मैं चोर नहीं हूँ। मुझे तोपके मुँह उड़ा दीजियेगा; फिर देखियेगा मैं कितनी शान्तिसे तोपके सामने खड़ा रह सकता हूँ।' कर्नल टेलरके कहनेसे बालक राजाको प्राणदण्डके

बदले कालेपानीकी सजा दी गयी।

जब उसे कालेपानी भेजा जा रहा था, तब राजाने हँसी-हँसीमें ही अपने अँगरेज पहरेदारकी पिस्तौल ले ली और मौका देखकर अपने ऊपर गोली दाग दी। इसके पहले उसने एक बार कहा था कि

'कालेपानीकी अपेक्षा मैं मृत्युको अधिक पसन्द करता हूँ। कैद और कालेपानीको तो मेरी प्रजाका एक

तुच्छ-से-तुच्छ पहाड़ी भी पसन्द नहीं करेगा, तब मैं तो राजा हूँ।' इस वीर बालक राजाका यह वृत्तान्त कर्नल मेटोज टेलरद्वारा लिखित 'स्टोरी आफ माइ लाइफ' (मेरी

जीवन-कहानी) नामक पुस्तकसे लिया गया है। भारतके इस बलिदानी बालक राजाके प्रति हमारा कोटि-

कोटि नमस्कार!

सात्त्विक वृत्ति (श्रीसुरेशचन्द्रजी) दूसरेकी सहायता कर सकें और अपनी साधनामें अग्रसर 'रामायणको मैं जीवनकी पुस्तक मानता हूँ और मेरा ऐसा विश्वास है कि जबतक हम उसको इस भाँति हो सकें।' इतना कहकर योगीजी शान्त मुद्रासे बैठ गये। समझनेका प्रयत्न नहीं करेंगे, 'राम-राज्य'की स्थापना कुछ लोग उठकर चले गये, लगभग पचीस व्यक्ति बैठे रहे। योगीजीने कहा—'मेरा ऐसा अनुमान था कि हमारे शरीर, मन तथा बुद्धिमें नहीं हो सकती। हजारों वर्षोंसे रामायणका पाठ घर-घरमें हो रहा है, परंतु पाँच-छ: व्यक्ति ही रुकेंगे, परंतु बात मेरी आशाके रामायणकी जो गारंटी-विपरीत हुई।' दो-तीन सज्जन एक साथ बोल उठे कि 'साहब! दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा॥ —है, यह रामायणका पाठ करनेवालोंके जीवनमें हमलोग तो आपके मुखसे और अधिक सुननेके लिये ही चरितार्थ होती नहीं पायी जाती। उनके शरीर रोगसे बैठे हैं। कुछ करने-धरनेवालोंमें नहीं हैं।'

बहुत-से व्यक्ति अपना जीवन सफल बना चुके हैं। तो फिर हमारी असफलताका क्या कारण है ? मेरे विचारसे हमलोग रामायणको एक धर्मकी पुस्तक-मात्र मानते हैं और उसका हमारे दैनिक जीवनसे भी कोई सम्बन्ध है— यह विचार करनेके लिये तैयार नहीं हैं।

विवेकके प्रकाशमें रखें, जिनसे लाभ उठाकर हम एक-

ग्रसित हैं, मन विकारयुक्त हैं तथा बुद्धि अज्ञानसे परिपूर्ण

है। इसका क्या कारण है? क्या रामायण गलत है?

नहीं, ऐसा नहीं है; क्योंकि इसके आधारपर साधनाद्वारा

पार्वतीने तप किया, मनु-शतरूपाने तप किया, भरत तथा अयोध्यावासियोंने साधना की। क्या ये सब मात्र ऐतिहासिक घटनाएँ हैं अथवा एक पौराणिक ग्रन्थकी उन गाथाओंमेंसे हैं, जिनका क्रियात्मक जीवनसे कोई सम्बन्ध नहीं है ? क्या हम भी उसी परिपाटीपर चलकर

वही प्राप्त नहीं कर सकते, जो उन्होंने किया? देश, काल तथा पात्रके अनुसार इस साधनाके

रूपमें परिवर्तन हो सकता है; परंतु मूल सिद्धान्त वे ही रहेंगे। यदि ऐसे कुछ साधक तैयार हों, जो रामायण इस

भाँति समझने और उसका क्रियात्मक उपयोग करनेको प्रस्तुत हों या कर रहे हों, तो बड़ा लाभ हो सकता है। मेरा यह निवेदन है कि लोग सत्संगकी समाप्तिके बाद रुक जायँ और हमलोग आपसमें बैठकर अपने अनुभव तथा कठिनाइयोंको बतायें तथा नवीन सुझाव स्वतःप्राप्त

उल्लेखनीय है—

कारण वह अपनी शिक्षा आगे बढ़ानेमें असमर्थ था, वह

मेरे पास आया और उसने अपनी कठिनाइयाँ मेरे सामने रखीं। मैं उसको अपने साथ रखनेपर राजी हो गया और उसको रहनेके लिये अपना घरका बाहरी कमरा दे दिया। घरपर ही उसके भोजनकी भी व्यवस्था कर दी।

योगीजी हँसने लगे—उपस्थित लोगोंकी मनोवृत्तिपर!

वहाँपर पुलिसके एक बहुत ऊँचे अफसर भी बैठे हुए

थे, जो योगीजीके अनुयायी थे तथा उनके सिद्धान्तोंपर

चलकर पर्याप्त लाभ उठा चुके थे। उनके मुखपर

पुलिसके अधिकारियोंकी-सी निरंकुशता न थी, अपितु

धार्मिक पुरुषोंका-सा माधुर्य तथा कोमलता थी। वे

प्रात:काल ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर भगवान्का स्मरण करते

थे। भोजनमें अन्नका परित्याग लगभग एक वर्षसे किये

हुए थे और दिनमें केवल एक बार कन्द-मूल-फल

तथा शाकका आहार करते थे। योगीजीके सत्संगमें

आनेवाले सभी व्यक्ति उन्हें श्रद्धा तथा आदरकी दृष्टिसे

देखते थे। उन्होंने कहा—'वैसे तो मेरा कोई विशेष

अनुभव नहीं है, किंतु आज प्रात:कालकी एक घटना

विश्वविद्यालयमें एल-एल०बी० में पढता है। धनाभावके

मेरे घरके बाहरी कमरेमें एक लड़का रहता है, जो

[भाग ९६

आज प्रात: लगभग पाँच बजे जब वह दाढी बना रहा था, तब उसने पानीका लोटा खिडकीमें रख

संख्या ८] शिव-स्तृति दिया। एक आदमी उस लोटेको उठानेकी नीयतसे अन्याय किया है, सहृदयताका बर्ताव करनेकी इच्छा खिड्कीके पास आया, पर अन्दर एक व्यक्तिको होती है। जब कान्स्टेबल उसे ले जाने लगे, तब मैंने बहुत देखकर लौट गया। उस कमरेके बाहर दरवाजेके पास एक टूटा हुआ उगालदान पड़ा था। वह उसको नरमीसे कहा— 'तुम कौन हो और तुमने चोरी क्यों की?' उठाकर नौ-दो ग्यारह हुआ। उस लड़केने देखा कि कोई व्यक्ति खिडकीके पास आया और उसको देखकर 'मैं उड़ीसाका एक गरीब ब्राह्मण हूँ। बाढ़से घर-दरवाजेकी ओर गया और वहाँसे कुछ उठाकर चला बार तथा खेती नष्ट हो जानेपर मैं भागकर गोरखपुर गया। वह कमरेके बाहर निकल आया, ठीक उसी आया और वहाँ रेलवेमें मजदूरी करने लगा। दुर्भाग्यसे समय मैं भी घरसे बाहर निकला। मुझे देखते ही छटनीमें वहाँसे भी निकाल दिया गया और अब कई उसने प्रणाम किया और उस घटनासे सुचित किया। दिनोंसे यहाँपर हूँ।' उसकी तलाशी लेनेपर कुछ ऐसे मैंने तुरंत अपने अर्दलीको उस आदमीको पकड़ लानेका प्रमाण मिले, जिससे उसकी बातोंकी पुष्टि हुई। उसको आदेश दिया। देखनेसे मालूम होता था कि कई दिनोंका भूखा है। लगभग आधे घंटेमें वह व्यक्ति पकडकर मेरे पास मुझे उसपर बहुत दया आयी और मैंने कान्स्टेबलको लाया गया। उस अर्दलीने पकड़ते समय ही उसकी उसे छोडकर चौकी लौट जानेका आदेश दिया और उस काफी मरम्मत कर दी थी। तो भी कोठीपर आते ही और व्यक्तिको भोजनकी सामग्री देकर विदा किया। लोगोंने उसकी पूजा शुरू कर दी। मेरे अन्दर भी कुछ 'मेरे जीवनमें यह पहला अवसर था कि एक तामस वृत्तिका प्रादुर्भाव हुआ और मैंने चौकीसे दो व्यक्ति चोरी करते हुए पकड़े जानेपर भी मैंने छोड़ दिया और तब भी मुझे कोई मलाल नहीं हुआ, अपितु एक कान्स्टेबलोंको बुलाकर उनकी सुपुर्दगीमें उस व्यक्तिको दे दिया। दैवी आनन्दकी अनुभूति हुई। मैंने ऐसा अनुभव किया किसी क्रूर तथा अनिष्टकारक कर्म करनेके बाद कि यह इस सात्त्विक वृत्तिका प्रभाव था, जिसका हमें ग्लानि होती है और शीघ्र ही कोमल भावनाओंका प्राद्भीव मेरे जीवनमें संयम एवं नियमके द्वारा हुआ है, जो मेरी साधनाके विशेष अंग हैं।' जन्म होता है और तब उस व्यक्तिसे, जिसके साथ हमने शिव-स्तुति (श्रीब्रह्मबोधिजी) 'रुद्रों में मैं ही हूँ शंकर', गीता में श्रीहरि जब बोले। तुम जपते हरिनाम अहर्निश तुमको पूजें राघव राम। ब्रह्मस्वरूप सदाशिव हो तुम, भेद स्वयं ईश्वर ने खोले॥ हे कार्तिकप्रिय, गणपति-वत्सल, कोटि-कोटि है तुम्हें प्रणाम॥ सहज-सरल लघु शिलाखंड शिवलिंग तुम्हारा घर बन जाता। सकल सृष्टि कल्याण-हेतु बन, अमृत त्याग हलाहल पीते। स्वर्ण नहीं पत्तों, जल-फल से ही निर्धन तुमको हर्षाता॥ रह अनिकेत दिगंबर शंकर, चंदन तज शव-भस्म लगाते॥ दीनों, दलितों, दुखियोंके ईश्वर हो तुम, करुणा के धाम। ऋद्धि-सिद्धि-ऐश्वर्य-प्रदाता, भवन त्याग हिमशिखर विराजें। हे गौरीपति, भोलेशंकर, कोटि-कोटि है तुम्हें प्रणाम॥ ध्यान-समाधि कठिन धारण कर, योगीश्वर सब कुछ परित्यागें॥ तुम सात्त्विक-तामसिक सभी के, तुम निर्धन के, तुम धनियों के। चन्द्रमौलि वासुकी-विभूषित, नंदीपूजित, हे सुखधाम। भूत-पिशाचों के आश्रय तुम, आश्रय तुम ऋषियों-मुनियों के॥ हे मृत्युंजय, हे गंगाधर, कोटि-कोटि है तुम्हें प्रणाम॥ हे हरिरूप, सुमंगलकारी! ब्रह्मबोधि का तुम्हें प्रणाम। तुम सब के औ सभी तुम्हारे, तुम निर्बल के, बलशाली के। तुम्हीं हृदय हिमगिरि-तनया के, तुम्हीं निलय दुर्गा-काली के॥ हे मृत्युंजय, हे गंगाधर, कोटि-कोटि है तुम्हें प्रणाम॥

नागपंचमी-व्रत-माहात्म्य एक बार महाराज युधिष्ठिरने भगवान् श्रीकृष्णसे कहा कि 'तुमलोग उच्चै:श्रवाके बाल बनकर उससे नागपंचमी-व्रतके विषयमें जिज्ञासा व्यक्त की, तब चिपक जाओ, जिससे मैं बाजी जीत जाऊँ—विनताको भगवान् श्रीकृष्णने कहा—'युधिष्ठिर! दयिता-पंचमी दासी बना लूँ।' तब उन नागोंने माताकी कुटिलतापर नागोंके आनन्दको बढानेवाली होती है। श्रावणशुक्ला उसे फटकारा कि यह महान् पाप है। हम तुम्हारा कहा नहीं करेंगे। तब कद्रुने क्रुद्ध होकर उन्हें शाप पंचमीमें नागोंका महान् उत्सव होता है। उस दिन वासुकि, तक्षक, कालिक, मणिभद्रक, धृतराष्ट्र, रैवत, दे दिया—'जाओ, तुम्हें अग्नि जला देगी। बहुत दिनोंके कर्कोटक और धनंजय-ये सभी नाग प्राणियोंको बाद पाण्डववंशी राजा जनमेजय विकराल सर्पयज्ञ अभयदान देते हैं। जो मनुष्य नागपंचमीके दिन नागोंको करेंगे। उस यज्ञमें प्रचण्ड पावक तुम्हें जला देगी।'

दूधसे स्नान कराते हैं, दूध पिलाते हैं, उनके कुलमें प्राणियोंको ये सदा अभयदान देते रहते हैं। जब नागमाता कद्रुने नागोंको शाप दे दिया, तब वे रात-दिन संतप्त हो रहे थे। जब उन्हें गायके दुधसे तृप्त किया गया, तबसे वे प्रसन्न होकर प्रिय हो गये।' युधिष्ठिरने पूछा—'जनार्दन! माता कद्रूने नागोंको क्यों शाप दिया? उस शापका निराकरण कैसे हुआ?' भगवान् श्रीकृष्णने कहा—अश्वोंका राजा उच्चै:श्रवा

२६

देखकर नागमाता कद्रुने अपनी बहन विनतासे कहा— 'देखो, देखो! अमृतसे उत्पन्न यह अश्वरत्न श्वेत है, पर आज इसके सभी श्वेत बाल काले दिखायी पड़ते हैं। तुम देखती हो या नहीं?' विनता बोली—'इस श्रेष्ठ घोड़ेका सर्वांग श्वेत है, न काला है न लाल। कैसे तुम्हें काला दिखायी पडता है?'

अमृतसे उत्पन्न हुआ था, वह श्वेत वर्णका था। उसे

कद्र बोली—'विनता! मैं एक आँखवाली इसे काले बालोंवाला देखती हूँ, परंतु तू दो आँखोंवाली

होकर भी नहीं देखती? कुछ शर्त रखो।' विनताने कहा—'कद्र! यदि तुम इसके काले केश दिखा दोगी तो मैं तुम्हारी दासी हो जाऊँगी। यदि तुम काले केश नहीं दिखा पाओगी तो तुम मेरी दासी होगी।' इस प्रकार शर्त (प्रण)-कर वे दोनों क्रुद्ध होकर चली गयीं। रात्रिमें सबके सो जानेपर कद्रने कुटिलता सोची। उसने अपने पुत्रों-काले नागोंको बुलाकर पहुँचे और सान्त्वना देते हुए बोले—'वासुिक! शोक मत करो। मेरी बात सुनो। यायावर वंशमें जरत्कारु नामक द्विज उत्पन्न हुए हैं। आगे चलकर वे बड़े तेजस्वी तपोनिधि होंगे। उन्हें तुम अपनी बहन विवाह दो। उससे आस्तीक नामक विख्यात पुत्र होगा। वह

नागोंके विनाशकारी उस नागयज्ञको राजाको समझा-

ही किया। नागोंको इससे अभयदान मिला।* वे इससे

ब्रह्माजीकी बात सुनकर प्रसन्न वासुकिने वैसा

माताके द्वारा शप्त सर्पोंको कुछ सूझा ही नहीं।

वासुकि नाग दु:खसे संतप्त हो मुर्च्छित होकर भूमिपर

गिर पड़ा। उसे दुखी देख ब्रह्माजी सहसा वहाँ आ

ऐसा शाप देकर कद्र चुप हो गयी।

बुझाकर रोक देगा।'

िभाग ९६

परम प्रसन्न हुए कि उनका वंशधर आस्तीक हम नागोंका विनाश रोक देगा। ब्रह्माजीने उनसे कहा-'आस्तीकद्वारा तुमलोगोंका यह भय-निवारण (श्रावण-शुक्ला) पंचमीको होगा।' इसलिये युधिष्ठिर! यह पंचमी शुभादयिता कही जाती है तथा नागोंको आनन्द देनेवाली है। इस तिथिको ब्राह्मणोंको भोजन कराकर नागोंकी इस प्रकार पूजा-प्रार्थना करनी चाहिये-

'भूतलपर जो नाग हैं, वे प्रसन्न हों। जो नाग हिमालयपर

रहते हैं, जो आकाशमें हैं, जो देवलोकमें हैं, जो नदियों-सरोवरोंमें हैं और जो बावली-तालाबोंमें हैं, उन सबको नमस्कार है।' ऐसा कहकर नागों और * परम्परा है कि नीचे लिखा श्लोक नित्य घरमें आस्तीक ऋषिका स्मरण करते हुए बोलनेसे सर्पोंका भय नहीं रहता— Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha संपीपसप भूद्र ते दूर्/ गुच्छ भूक्षविष । जनमजयस्य यज्ञानते आस्तीक वचन स्मर ॥

संख्या ८] नागपंचमी-द	व्रत-माहात्म्य २७
**************************************	**************************************
विप्रोंकी यथायोग्य पूजाकर उनका विसर्जन करे।	पश्चात् ब्राह्मणको भोजन कराये। ब्राह्मण-भोजनमें घी-
तत्पश्चात् सेवकों और परिजनोंसहित स्वयं भोजन	खीर-मोदककी प्रधानता होनी चाहिये। सर्पके काटनेसे
करे। पहले मधुर पदार्थ खाये, पीछे अन्य भोज्य	मरे हुए प्राणीके लिये नारायणबलि करे। दान और पिण्डदानमें
पदार्थ स्वेच्छया ग्रहण करे। इस प्रकार व्रत-नियम	ब्राह्मणोंको तृप्त करना चाहिये। एक वर्ष पूर्ण होनेपर
करनेवाला मरनेके बाद नागलोकको जाता है, वहाँ	वृषोत्सर्ग करना चाहिये।स्नानकर जलदान करे—'श्रीकृष्ण
अप्सराएँ उसकी पूजा करती हैं और वह श्रेष्ठ विमानपर	प्रसन्न हों—यह प्रार्थना करे। प्रत्येक मासमें अनन्त, वासुिक,
आरूढ़ हो अभीष्ट कालतक विहार करता है। वहाँसे	शेष, पद्म, कम्बल, अश्वतर, धृतराष्ट्र, शंखपाल, कालिय,
पुनः इस भूतलपर जन्म लेनेपर वह राजाधिराज होता	तक्षक तथा पिंगल नामक महानागोंका नामोच्चारण करना
है। उसके पास सभी रत्नोंका भण्डार होता है, सवारियाँ	चाहिये। वर्षकी समाप्तिपर पारणके समय ब्राह्मणोंको
होती हैं, सम्पत्ति होती है। वह पाँच जन्मोंतक निरन्तर	भोजन कराये। इतिहासवेत्ता (विद्वान्) विप्रको स्वर्णका
राजा होता है। उस अवधिमें वह आधि-व्याधिसे	नाग तथा सवत्सा सीधी गौ, कांसेकी दोहनी (दुग्ध दुहनेका
मुक्त रहता है। पत्नी और पुत्र, उसके सहायक—	पात्र)-सहित देनी चाहिये।
अनुकूल होते हैं। इसलिये नागोंकी घी-दूध आदिसे	विद्वानोंने यह पारणविधि बतायी है। इस श्रेष्ठ व्रतके
सदा पूजा करनी चाहिये।	करनेसे बान्धवोंको सद्गतिकी प्राप्ति होती है। सर्पादिके
युधिष्ठिरने पुन: पूछा—'भगवन्! क्रुद्ध नाग जिस	काटनेसे जिनकी अधोगति हो जाती है, उनके निमित्त यदि
व्यक्तिको डस लेते हैं, उनका क्या होता है?' भगवान्	एक वर्षतक यह उत्तम व्रत भक्तिपूर्वक किया जाय तो वे
श्रीकृष्ण बोले—'राजन्! नागके डसनेसे मृत्युको प्राप्त	जीव उस यातनासे मुक्त होकर शुभगतिको प्राप्त होते हैं।
व्यक्ति अधोलोकमें गिरता है। वहाँ वह विषहीन सर्प	जो भक्तिपूर्वक नित्य इस आख्यानको पढ़ता या सुनता है,
होता है।' युधिष्ठिरने पुनः पूछा—'साँपके काटनेसे	उसके कुटुम्बमें नागोंसे कोई भय नहीं होता। इसी प्रकार
जिसके पिता-माता, भाई-मित्र, पुत्र, बहन, कन्या या	जो भाद्रपदशुक्ला पंचमीको काले रंगोंसे नागोंका चित्र
स्त्री—कोई भी सम्बन्धीजन मर जाते हैं, उनके उद्धारके	बनाकर गन्ध-पुष्प-घी-गुग्गुल-खीर आदिसे भक्तिपूर्वक
लिये उसे क्या दान-व्रत-उपवास करना चाहिये, जिससे	पूजन करता है, उसपर तक्षक आदि नाग प्रसन्न होते हैं।
वे स्वर्गको प्राप्त हों।'	उसके सात कुल (पीढ़ी)-तक नागोंसे भय नहीं रहता।
भगवान् श्रीकृष्णने कहा—'राजन्! उन्हें नागोंको	इसी प्रकार आश्विनमासकी शुक्ला पंचमीको कुशका नाग
प्रसन्न करनेवाली पंचमीका व्रत एक वर्षतक करना चाहिये।	बनाकर इन्द्राणीके साथ उनकी पूजा करे। घी–दूध और
उसका विधान सुनिये—भाद्रपदमासके शुक्लपक्षकी पंचमी	जलसे स्नान कराकर दूधमें पके गेहूँ तथा अन्य भोज्य
अधिक पुण्यकारक है। सद्गतिकी कामनासे उसे ग्रहण	पदार्थ उन्हें श्रद्धा–भक्तिपूर्वक समर्पित करे तो शेष आदि
करना चाहिये। इस प्रकार एक वर्षमें बारह पंचिमयाँ होती	नाग उसपर प्रसन्न होते हैं, उसे सुख-शान्ति प्राप्त होती
हैं। व्रतके पूर्व दिन चतुर्थीको रात्रिमें एक अन्न ग्रहण	है। मृत्युके बाद वह प्राणी उत्तम लोकको प्राप्त करता है,
करना चाहिये। दूसरे दिन पंचमीको नागकी पूजा करनी	जहाँ चिरकालतक आनन्द भोगता है। यह पंचमीव्रतका
चाहिये। सोने या चाँदी या लकड़ी अथवा मिट्टीका पाँच	विधान है। सर्पींका सर्वदोष-निवारक मन्त्र यह है—'ॐ
फनोंका नाग बनवाकर श्रद्धा-भक्तिपूर्वक उसकी पूजा	कुरुकुल्ले हुं फट् स्वाहा।' इस मन्त्रसे भक्तिपूर्वक सौ
करे। उन्हें करवीरके फूल, कमलके फूल, सुन्दर जाती-	पंचिमयोंको जो सर्पोंकी पूजा पुष्पोंसे करते हैं, उनके घरमें
पुष्प, चन्दन, नैवेद्य आदि समर्पितकर पूजा करे। पूजाके	साँपोंका भी भय नहीं होता।[भविष्यपुराण]
	>

जीवनमें सद्गुणोंकी वृद्धि कैसे हो? प्रसिद्ध उद्योगपति लक्ष्मीपति सिंहानियाके बारेमें सन्तोंका निवास अथवा जहाँ सत्संग हो रहा हो, वैसी भूमि। आप स्वयं अपनी रुचिको परखिये, निरखिये। अपने संस्मरणमें स्वामी अखण्डानन्दजीने लिखा है कि

एक बार भाई लक्ष्मीपितसे कोई सत्संगका प्रसंग चल आप वैसे ही होने जा रहे हैं। रहा था, जिसमें उन्होंने पूछा कि मनुष्यके जीवनमें ५-आप अपना समय कैसे व्यतीत करते हैं, सद्गुणोंकी वृद्धि कैसे होती है? इसपर मैंने उनको निद्रा, आलस्य, प्रमादके कारण निकम्मे तो नहीं हो रहे हैं?

श्रीमद्भागवतका यह श्लोक सुनाया— आगमोऽपः प्रजा देशः कालः कर्म च जन्म च। ध्यानं मन्त्रोऽथ संस्कारो दशैते गुणहेतवः॥

(818318) इस श्लोकका अर्थ और व्याख्या उन्हें बहुत पसन्द

आयी, जो इस प्रकार है-मनुष्यके जीवनमें सत्त्वगुण, रजोगुण या तमोगुणका प्रकाश-विकास अथवा वृद्धि-समृद्धिके लिये दस बातोंका

ध्यान रखना आवश्यक है। यदि वे सात्त्विक होंगी तो जीवनमें सद्गुणोंका विकास होगा। वे दस बातें इस प्रकार हैं— १-आप अध्ययन क्या करते हैं?

हृदय पवित्र करनेवाले उपनिषद्, गीता, भागवत, रामायण आदि ग्रन्थ। भोग-विलास, धनोपार्जन-सम्बन्धी पुस्तकें अथवा भूत-प्रेत, चोर, डाकू आदिके काल्पनिक ग्रन्थ या बेईमानी, चालाकी, तिलस्माती या वासना बढानेवाली कहानियाँ ? आपके जीवनको अपनी-अपनी

दिशामें आकृष्ट करनेवाली यही किताबें हैं। २-आप कैसे जलका सेवन करते हैं, स्नानमें, पानमें, भोजनमें? भगवान्का चरणामृत, पवित्र नदी एवं स्रोतोंका

जल, फलोंका रस, शाकोंके द्वारा निर्मित पेय अथवा सुरा आदि? आप जलके प्रभावसे मुक्त नहीं रह सकते। ३-आप कैसे लोगोंमें रहना, मिलना-जुलना पसन्द करते हैं?

आप जैसे लोगोंमें रहेंगे, बड़ा मानकर सेवा करेंगे और जैसा होना चाहेंगे, वैसे हो जायँगे।

४-आपको मनसे कैसे स्थान प्रिय हैं?

नदी-तट, पर्वत, हरी-भरी वनराजि, तीर्थ, मन्दिर,

होकर कर्म करते हैं? निश्चय ही आपके जीवनमें विक्षेपकी वृद्धि होगी। आप अपने जीवनके अमूल्य

क्षणोंका कौन-सा अंश सत्यके चिन्तनमें, एकाग्रतामें, भगवद्धिक्तमें एवं लोकहितमें लगाते हैं? आपका एक क्षण आपके जीवनको स्वर्ग एवं नर्क बनानेमें समर्थ है।

६-आपको क्या करना पसन्द है? चोरी, हिंसा, पक्षपात? मोहसे प्रेरित कर्मींसे बचनेका प्रयास करते हैं ? स्वयं कष्ट सहकर भी दूसरोंका हित

करनेका प्रयत्न करते हैं या नहीं। कर्म बाहरसे देखनेमें कितना भी छोटा हो, उसका प्रभाव बहुत व्यापक होता है। भले दूसरोंको उसका पता न लगे, परंतु आपका अन्त:करण उसके प्रभावसे मुक्त नहीं रह सकता। प्रत्येक क्रियाकी प्रतिक्रिया होती है और वह अपने

अंग-अंग और अन्तरंगपर भी होती है। सबसे अच्छा

यह होगा कि आप कोई कर्म करनेके पहले इस

आप अर्थिलप्सा एवं भोग-वासनासे आक्रान्त

भाग ९६

ओर गम्भीरतासे ध्यान दे लें कि इससे मेरी आदतें सुधरेंगी या बिगडेंगी। जिससे किसीका अहित होता हो और अपनी आदत बिगड़ती हो, ऐसा कर्म कभी नहीं करना चाहिये। ७-किस वंशमें आपका जन्म हुआ, यह तो

एक गौण बात है। अतः शरीरका जन्मदाता शिक्षक अथवा गुरु होता

है। उत्तम वंश-परम्परा, दोषापनयन एवं गुणाधानरूप संस्कार और सदाचारका पालन-ये तीनों ही हमारे

जीवनको सँवारते हैं। जीवनमें सदाचारकी स्थिति ही सच्चा जीवन है। आप अपनी बुद्धि-तुलापर तौलकर देख लीजिये कि यह आपका जन्म अपने आचरणसे कुलीन

· · · · · ·	जपका रहस्य			
<u> </u>				
हो रहा है न।	एवं परमात्म-चिन्तनसे भरपूर होते हैं। भूत-भैरवके मन्त्र			
८-आपके चिन्तनकी दिशा क्या है?	या दूसरोंका अहित करनेवाली मन्त्रणा हमारे जीवनको			
जागते समय, बैठे हुए एकान्तमें, सोनेके पूर्व आप	बुराईके गड्ढेमें डाल देती है।			
मन-ही-मन क्या सोचते रहते हैं ? आत्मचिन्तन, लोक-	१०-प्रकृतिका गुण-दोषमय प्रवाह अनादि-			
कल्याण या शरीर, भोग, रोग, राग, योग। सावधान!	अनन्त है।			
यदि चिन्तनकी दिशा अनुचित एवं अशुद्ध दिशामें चली	चित्त-वृत्तियोंकी नदी अन्तर्मुखता और बहिर्मुखता			
गयी तो आप कहींके नहीं रहेंगे, न घरके न घाटके।	दोनोंकी ओर जाती है। उसमें कभी विष बहता है, कभी			
मनुष्यका वास्तविक चिन्तन ही उसका सच्चा जीवन है।	अमृत। कभी शान्ति, करुणा तो कभी ईर्ष्या-द्वेष। इसीमें			
यह निश्चित रूपसे समझिये कि कोई दूसरेके	सावधान रहनेकी बारी है। आप अपनेको उत्तम विचारोंकी			
मनका ज्ञाता नहीं हो सकता। न आपके मनकी बात दूसरे	धारामें डाल दीजिये। कभी डूबेंगे, कभी उतरायेंगे।			
समझ पाते हैं और न तो दूसरोंके मनकी आप। अतः	कभी-कभी दायें-बायें भी होंगे। परंतु उत्तमताकी धाराको			
ठोस जगत्में आप अपनी वाणी एवं शरीरके व्यवहारको	न छोड़िये। वह केवल बाह्य जीवनको ही नहीं सुधारेगी-			
अपने पवित्र चिन्तनका अनुयायी बनाइये। दूसरोंकी बुराई	सँवारेगी, बल्कि अन्तरंग जीवनको भी अमृतमय बना			
सोचना अपनेको बुरा बनाना है। ध्यान बुरा है तो आप	देगी। थोड़े ही दिनोंमें आप स्वयं आश्चर्यचिकत रह			
बुरे हैं। ध्यान अच्छा है तो आप अच्छे हैं।	जायँगे कि आपके जीवनको इतना मधु-मधुर, इतना			
९-आप मन्त्रणा किस लक्ष्यसे करते हैं?	सरस, इतना सौरभमय, इतना सुकुमार और इतना			
आपके संकल्प एवं योजनाका उद्देश्य क्या है?	संगीतमय क्यों बनाया गया? आप अमृतके पुत्र हैं और			
आपके मनमें बार-बार क्या आता है? आप किस	अमृत होने, रहनेमें ही आपके जीवनकी सफलता है।			
मन्त्रका जप करते हैं ? हृदय पवित्र करनेवाले मन्त्र संयम	[प्रेषक—प्रो० श्रीसन्तोष कुमारजी तिवारी]			
जपका	` रहस्य			
(श्रीरामलाल	•			
	भावनम्'। जिन इष्टदेवके नामका या मन्त्रका जप			
होता है। उनके मनमें यह जमा हुआ है कि इष्टदेवका	किया जाय, उसके आशय, हेतु या प्रयोजनका भी			
नाम या मन्त्रजप केवल माला लेकर उच्चारण करते हुए	विचार किया जाय। माला लेकर मन्त्रका या नामका			
बैठकर निश्चित संख्या पूरी कर लेना है। इस रीतिसे	निश्चित संख्यामें उच्चारण करना एकांगी जप है।			
आजकल इस भारत-भूमिमें करोड़ोंकी संख्यामें जप हो	सम्भव है, इस विधिसे कालान्तरमें चित्त एकाग्र			
रहे हैं। प्राचीन साहित्य भी इसका समर्थन करता है—	होकर विचारमग्न होने लगे। इस प्रकार निर्मल विचारसे			
अमुक मन्त्र या नाम-जपसे अमुक लाभ होता है।	चित्तका शुद्ध होना सहज है। शुद्ध चित्तमें इष्टदेवका			
यथा—	ध्यान सुगम हो जाता है। ध्यानद्वारा इष्टदेवकी कृपा पाना			
'गायत्रीजपकृद्भक्त्या सर्वपापैः प्रमुच्यते।'	सम्भव है। यदि जप करते समय अर्थकी (हेतु, आशय,			
-आदि वाक्य शास्त्रोंमें कहे गये हैं। यद्यपि इन	प्रयोजनकी) भावना नहीं रही, तो बहुत देरसे फल होता			
वाक्योंपर संदेह करना अनुचित है, तथापि इनपर विचार	है। इस भावनापर चित्तको जमाना ही यथार्थ ढंग है।			
करना सर्वथा वांछनीय है।	यह सात्त्विक कार्य है और सत्त्वगुणप्रधान वृत्तिवाले ही			
जपके सम्बन्धमें सूत्रकार कहता है—' तज्जपस्तदर्थ –	कर सकते हैं। अधिकांश मनुष्य रजोगुण और तमोगुणसे			

व्याप्त हैं। अत: उनका किया हुआ जप यथार्थ फल आयुर्वेदानुसार खान-पानको शुद्ध रखकर जठराग्निका; संयम, नियम या ब्रह्मचर्यसे वीर्याग्निका नहीं देता। तामस बहुत रजोगुन थोरा। कलि प्रभाव बिरोध चहुँ ओरा॥ और ईश्वरार्चन, ध्यान या स्वाध्याय (वेदपाठ आदि)-युगके प्रभावसे मनुष्योंका काम अनिधकार चेष्टाकी से ज्ञानाग्निका संरक्षण करना चाहिये। इनका यथोचित कोटिका हो रहा है। इसीसे जप करनेके उपरान्त भी संरक्षण करना ही 'जप' का ठीक ढंग होगा। जपमें मनको शान्ति नहीं मिलती। आचार्योंने जपकी तीन निरन्तर स्मरण करते रहना आवश्यक है और भावनाके विधियाँ बतायी हैं। जब बुद्धिसे अक्षरश्रेणी और स्वरयुक्त प्रतिकृल कामोंको सर्वथा छोड देना। यदि बालकोंको पदका उच्चारण करके अर्थकी भावना रखी जाती है, तब कुछ वस्तु (पुस्तक, कलम, पट्टी, कापी, कुर्ता, चप्पल आदि) लानेका वचन दे दो, तो वे उस वस्तुका 'मानसजप' कहलाता है। जब जिह्वा-ओष्ठको किंचित् निरन्तर स्मरण करते और माता-पिताको तंग किया चलाकर, मनमें इष्टदेवका ध्यान रखकर किंचित् श्रवणयोग्य उच्चारण होता है, तब 'उपांशु जप' कहलाता है और करते हैं। उनको तो उस वस्तुकी लौ लग जाती है, जब वैखरी वाचासे उच्चारण किया जाता है, तब वह मानो वे उस वस्तुका जप करते हैं। यद्यपि यह निकृष्ट जप है, तथापि विधि ठीक है। इसी लौसे 'वाचिक जप' कहलाता है। इस तरह 'वाचिक' से 'उपांशु' और 'उपांशु' से मानसिक जप अधिक श्रेष्ठ हमको अपनी पूर्वस्थित तीनों अग्नियोंका संरक्षण करनेमें बताया जाता है। सचेत रहना चाहिये। यह परम्परागत रूढ़ि है। इसमें अधिकांश जनता इन अग्नियोंके सिवा शरीर-रचनामें पंच महाभूत फँसी हुई है। कहा गया है—'गतानुगतिको लोकः।' (तत्त्व) भी उपस्थित रहते हैं। प्रत्येक तत्त्व अपने संसार ही भेड़िया-धसानका काम करता है। बहिरंगवालोंका गुणका अधिष्ठान है। पृथ्वीमें क्षमा, जलमें नम्रता, शीतलता, अग्निमें शुद्धता, वायुमें अनासक्ति, गतिशीलता, अनुकरणप्रिय होना सहज है, इसलिये अधिकांश जनता मनमानी करने लग जाती है। उनको विचार आकाशमें निर्लेपता है। ये सब हमारे शरीरके साथ करना कठिन जान पडता है। ही उत्पन्न हुए हैं। नहीं, इनका मिश्रण ही हमारा शरीर है। अत: इन गुणोंका विकास करना आवश्यक यहाँ नवीन ढंगसे जपपर विचार किया जाता है। है। विषयोंमें फँसकर इन गुणोंको दबा देना ही दु:खों 'जप' शब्दका विश्लेषण करनेसे 'ज' से जन्मजात और 'प' से पालन करना प्रतीत होता है। अत: जपका हेत् और व्याधिका कारण हो जाता है। इनका संतुलन अपनी जन्मजात वस्तुका पालन करना है। शरीरनिर्माणमें रखनेसे मनुष्यका मन स्थिर होकर काम करता है। इन्हीं तत्त्वोंसे ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियोंका आविर्भाव जठराग्नि, वीर्याग्नि और ज्ञानाग्नि (चेतना)-का आरम्भ

तीनां क्यों में क्या के ब्रिट किथा के हैं river https://dsc.gg/dhaन्ना बहै। स्रो Aिष्ट स्थानक के EBY Avinash/Sha

हुआ है। इन तत्त्वोंका संतुलन रखनेसे इन्द्रियाँ संयमित

रहती हैं। इन्द्रियोंके संयमसे मनमें प्रसन्नता आती है।

प्रसन्नतासे सब दु:खोंका नाश हो जाता है; क्योंकि

प्रसन्न चित्तसे बुद्धि स्थिर होती है और मनुष्य सुखी

होता है। जपमें अर्थकी भावनासे हीन मनुष्यका मन

अशान्त रहता है। अशान्त कभी सुखी नहीं हो सकता।

तीनों अग्नियोंका संरक्षण करके पंच-तत्त्वोंका संतुलन

रखकर जीवन-निर्वाहार्थ काम करते रहना जीवनोपयोगी

भाग ९६

हुआ है। वेदमन्त्रमें कहा है—
'अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजं होतारं रत्नधातमम्।'
'मैं यज्ञके (जीवनके) ऋतुके अनुसार काम करनेवाले पूर्व ही रखे हुए (स्थित) अग्निदेवकी स्तुति या पूजा करता हूँ। वह आवश्यक सामग्री (आहुति) डालनेवाला और रत्न (श्रेष्ठ वस्तु) धारण करनेवालोंमें सर्वोत्कृष्ट है। हमारे शरीरोंमें अग्निदेव

लंकाकी अधिष्ठात्रीदेवीद्वारा निशाचर-संहारकी भविष्यवाणी संख्या ८] लंकाकी अधिष्ठात्रीदेवीद्वारा निशाचर-संहारकी भविष्यवाणी (श्रीइंदल सिंहजी भदौरिया) सुन्दरकाण्ड श्रीरामचरितमानसका हृदय माना जाता नाश होनेका अवसर आ गया है। है। इसमें अतुलित बलधाम, बुद्धि, विवेक और विद्यानिधान लंकापुरी अपनी रमणीयता, वैभवपूर्णता, रम्यता श्रीहनुमानजीकी स्तृत्य शक्ति-भक्तिमयी सुकीर्तिका विशद और भव्यताके कारण सदैव देवताओं, यक्षों और दानवोंके आकर्षणका केन्द्र रही है। मानसकारने इस वर्णन है। पवनपुत्रकी शुचिता, रुचिता और श्रीरामप्रियताके पावन प्रसंगोंने ही सुन्दरकाण्डके नामकरणकी सार्थकता तथ्यको इस तरह प्रस्तुत किया है-सिद्ध की है। सुन्दरकाण्डके अनेक प्रसंग अनूठे, भोगावति जिस अहिकुल बासा। अमरावति जिस सक्रनिवासा॥ अभिनव, अद्भुत एवं गूढ़ रहस्योंसे परिपूर्ण हैं। इसी तिन्ह तें अधिक रम्य अति बंका। जग बिख्यात नाम तेहि लंका॥ शृंखलाको उद्धासित करती है श्रीरामचरितमानसकी यह (रा०च०मा० १।१७८।७-८) प्रतिकल्पमें सामर्थ्यशाली, शौर्यवान् और प्रतापी ही चौपाई— इसमें निवास करते हैं। यथा— बिकल होसि तैं कपि के मारे। तब जानेसु निसिचर संहारे॥ निशाचरोंके समूल विनाशकी भविष्य गाथा प्रस्तुत हरि प्रेरित जेहिं कलप जोइ जातुधानपति होइ। चौपाई अपने-आपमें समाहित किये हुए है। इस रहस्यमय सूर प्रतापी अतुलबल दल समेत बस सोइ॥ प्रसंगके कथाक्रमके अनुसार हनुमान्जी सीताजीकी खोजमें (रा०च०मा० १।१७८ख) वाल्मीकि रामायण, अध्यात्म रामायण, अग्निपुराण जब अपना अतिलघु रूप धारणकर रात्रिके समय लंकामें प्रवेश करते हैं, तो लंकाकी अधिष्ठात्रीदेवी लंकिनी आदि सद्ग्रन्थोंमें लंकिनीको लंकानगरीके रूपमें व्याख्यायित हनुमान्जीसे कहती है कि 'मेरा निरादर करके कहाँ चला किया गया है। यथा— जा रहा है ? तू मेरा मर्म (भेद) नहीं जानता, यहाँ छिपकर ····अहं हि नगरी लंका स्वयमेव प्लवंग**म**। आनेवाले ही मेरा आहार होते हैं।' यथा— (वाल्मी०५।३।३०) गोस्वामी तुलसीदासजीने भी लंकिनीका पर्याय जानेहि नहीं मरमु सठ मोरा। मोर अहार जहाँ लगि चोरा॥ लंका माना है। यथा— (रा०च०मा० ५।४।३) यह सुनकर हनुमान्जी अपना महाकपिका रूप पुनि संभारि उठी सो लंका। जोरि पानि कर बिनय ससंका॥ धारणकर एक मुष्टिका (घूँसा)-प्रहार उसपर करते हैं, (रा०च०मा०५।४।५) जिससे वह खून उगलती हुई भूमिपर लुढ़क जाती है। लंका(लंकिनी) स्वभावसे सद्वृत्ति मनोदशाकी है। लेकिन पुरी-अधिष्ठात्री होनेके नाते नगरके अभिरक्षणको मुठिका एक महा कपि हनी। रुधिर बमत धरनीं ढनमनी॥ अपना कर्तव्य एवं परमधर्म मानती है। इसीलिये वह (रा०च०मा० ५।४।४) हनुमानुजीके प्रबल प्रहाररूपी शक्तिपातसे अभिप्रेरित हनुमानुजीका सांकेतिक प्रकारसे परीक्षण करती है कि होकर वह (लंकिनी) अपने-आपको सँभालकर विनती क्या ये मेरे कूट मर्मको पहचानते हैं? करते हुए यह रहस्य उद्घाटित करती है कि जब बिरंचि जानेहि नहीं मरम् सठ तू मेरी शठताका मर्म नहीं जानता। (मेरा स्वभाव (ब्रह्माजी)-ने उग्र तपस्याके फलस्वरूप रावणादिको वरदान दिया, तो उसके उपरान्त मेरी प्रार्थनासे द्रवित शठ हो गया है) (मानसपीयूष ख०६, पू०५२) टिप्पणीके होकर उन्होंने मेरे लंकामें निवासकी अवधिकी सीमा अनुसार लंकानगरीकी अधिष्ठात्री देवी लंका (लंकिनी) बाँधते हुए कहा कि जब श्रीराम-दुतके प्रहारसे तुम दैवीय प्रकृतिकी होनेके कारण देवताओंकी कृपाभृता थी। आहत होगी, तभी समझ लेना कि अब निशाचरकुलका इसी आधारपर उसने रावणको वरदान देने आये ब्रह्माजीको

व्याकुल कर दिया, अब तो राक्षसोंके समूल विनाशका जल्दी छुटकारा पानेके लिये राक्षसोंके अन्तका समय समय आ गया। तभी वह अपनेको बडभागिनी, पुण्यभागी ज्ञात किया था। मानकर हनुमान्जीसे कहती है-मानस-पीयूष एवं अग्निपुराणके अनुसार ब्रह्माजीने तात मोर अति पुन्य बहुता । देखेउँ नयन राम कर दूता॥ रावणको लंकापुरीमें पाँच करोड़ वर्ष राज्य करनेका (रा०च०मा०५।४।८) लंकाके सद्प्रयासोंके परिणामस्वरूप ही निशाचरोंके वरदान दिया था। उसी समय लंकाने ब्रह्माजीसे यह प्रार्थना की थी, कि इन दुष्टोंके यहाँ निवाससे मुझे बड़ा समूल विनाशकी चिह्नित भविष्यवाणी ब्रह्माजीने की थी, आत्मिक दु:ख होगा। कृपाकर बतानेका कष्ट करें कि जिसकी लंकाने चिरप्रतीक्षा की थी। वह निरन्तर इस किसी धर्मात्मा राजाका राज्य यहाँ कब होगा? लंकिनी खोजबीनमें रहती थी कि कब वह शुभ संकेत प्राप्त होगा, जब यहाँसे इन आततायियोंका नाश होगा।

(लंका)-की इस विनतीपर ब्रह्माजीने यह चिह्न बताया था कि जब रामदूत किपके प्रहारसे तुम विकल होगी, तभी समझना कि निसाचरोंके विनाशका समय आ गया। अत: ब्रह्मवाक्य कभी मिथ्या नहीं हो सकता, यथा—'स्वयंभूविहितः सत्यो न तस्यास्ति व्यतिक्रमः।'

अपनी आपत्ति दर्शाते हुए इनके संरक्षण-दायित्वसे

(५।३।४८) इस प्रकार जब उसे यह अटल विश्वास हो गया कि श्रीरामदूत हनुमान्जीने मुझपर प्रहारकर

विश्वके लिये एक रहस्य बनी है। झेनके चुम्बकीय

आकर्षणके वशीभूत होकर विश्वभरके आध्यात्मिक

जिज्ञासु खिंचे चले आते हैं।गौतम बुद्धका कमलसूत्र जापानी

ब्रह्मावर्तके वैदिक वाङ्मयसे है। यहाँके वैदिक मनीषासे सम्पन्न मन्त्रद्रष्टा ऋषियोंने 'ध्यान और साधना 'की ख्याति

सातों द्वीपोंतक पहुँचायी। यही रहस्यमय ध्यान-साधना

तिब्बतकी भोटियाँ भाषासे नाम बदलकर जापान पहँची।

विचित्र साधना-शैली कौतृहल और आकर्षण दोनोंका

झेनका सीधा सम्बन्ध जम्बूद्वीप भरतखण्ड भारतवर्ष

भाषाके नये कलेवरमें नवसाधकोंका प्रिय मन्त्र बना है।

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।। झेन साधनाकी रहस्यमयी कुंजी

(श्रीरामशास्त्रीजी) पुरबके देश जापानकी साधनाकी झेन-पद्धति सम्पूर्ण

रोचक कथाएँ मिलती हैं। देश और दुनियामें सर्वश्रेष्ठ

इस प्रकार जब उसे आज हनुमान्जीके प्रहारसे यह

आभास हो गया कि ब्रह्माजीकी उक्ति अब साकार होने

जा रही है, तब वह स्वयं उस दिशामें सहयोगी बनकर

श्रीहनुमान्जीका स्वागतकर शुभ मार्ग प्रशस्त करती है—

केन्द्र रही। तलवारबाजीके माध्यमसे ध्यान-साधनाकी

(रा०च०मा० ५।५।१)

भाग ९६

तलवारबाजीसे सर्वोच्च साधनाके लिये एक झेन फकीर

प्रसिद्ध था। झेन साधक फकीर गहरे वनके बीच गायोंके साथ रहता था। सुदुर हिमालयसे उसका नाम सुनकर एक

तरुण मंजिल-दर-मंजिल कुच करता और ढूँढता उस

वनके समीप एक गाँवमें पहुँचा। गाँवके मुखियाको

आश्चर्य हुआ कि तरुण झेन (झेन पागल)-की खोजमें आया है। मुखियाने समझाया कि खापा (पागल)-से

मिलकर कुछ नहीं मिलेगा, वापस लौट जाओ। इससे

तरुणके मनमें फकीरसे मिलनेकी कामना और प्रबल हुई।

घने वनके बीच गायोंके बाडेमें झेन फकीर अपनी अजेय तलवारको धार लगा रहा था। तरुणने दौड़कर

फकीरके पैर पकड़ लिये।झेन फकीरने तरुणको देखा और अनदेखा कर दिया, परंतु तरुण इसी प्रतीक्षामें पैर पकड़े बैठा रहा कि कभी-न-कभी तो गुरु उससे पुछेंगे कि क्यों आये

जापानी भाषामें ध्यान अपभ्रंश होकर 'झेन' कहलाया। पूरबके द्वार जापानमें सूर्यपूजा और ध्यानका अनुष्ठान देश-काल-परिस्थितिके कारण नवस्वरूपमें सामने आया। ध्यान यानी झेनमें निष्णात साधकोंने बहुत ही अनोखे तरीके-से साधनाके नवपथ चुने। झेन फकीरोंकी

संख्या ८] झेन साधनाकी	रहस्यमयी कुंजी ३३
*************************************	****************************
हो ? उधर फकीर तलवारको धार लगाता और मुसकराते	चूल्हा जलाया। बड़े कलशमें छानकर दूध भरा। जैसे ही
हुए गीत गाता रहा। घण्टोंतक यही क्रम चला। अन्तमें	तरुणने दूधमें पानी डालना चाहा, सड़ाकसे खाण्डेकी मार
तरुणने कहा—' महात्मन् ! मैं आपसे तलवारबाजीके माध्यमसे	पड़ी। तरुण मारसे कराह उठा।
सर्वोत्तम ध्यान-पद्धतिको सीखने परम पवित्र कैलासवाले	दूसरे दिन, तरुणद्वारा गायोंके दूध-दोहनकी बाल्टीसे
क्षेत्रसे आया हूँ। फकीरने घूरकर तरुणको देखा। तरुण	दूध छलका कि गलतीपर पुन: खाण्डेकी मार पड़ी। झेन
बार-बार आनेका कारण बताता रहा। घण्टों बाद फकीर	फकीर दूधके कम पकनेपर भी गलती बतानेके स्थानपर
बुदबुदाये 'पचहत्तर वर्ष साधना करोगे ?'	खाण्डा लहराता। तरुणके वसन्त-दर-वसन्त बीते, पर
फकीरका उत्तर तरुणको सन्न करनेवाला रहा।	दूध दोहने, पकाने और परोसनेमें कमीपर खाण्डेका तेज
उसने बहुत ही विनम्र स्वरमें कहा—'महात्मन्! मैं सौ	प्रहार होता रहा। वह मन-ही-मन सोचता कि गुरुजी
वर्षकी आयुमें सर्वश्रेष्ठ साधक बनकर क्या करूँगा?	तलवारकी साधना कब शुरू करेंगे। वह गलती होनेपर
आप मुझपर दयाकर साधना शीघ्र पूर्ण करनेका उपाय	गुरुकी छायासे खाण्डेकी मारसे बचनेका जतन करता
बतायें।' फकीरने सर्द स्वरमें कहा कि 'चलो सत्तर	अथवा दूध उफनते ही हवाकी सरसराहटसे खाण्डेकी
वर्ष।' तरुणने एक बार फिर गुरुसे दयाकी भीख माँगी।	मारका अनुमान लगाकर बचनेका उपक्रम करता। उसके
यह क्रम घण्टों चला। तब कहीं झेन फकीरने पसीजकर	लिये हर दिन पिटाईसे बचना ही ध्यान-साधना बना था।
कहा कि साधनामें कम-से-कम ५० वर्ष तो चाहिये।	इस रोचक कथाके अन्तिम पड़ावके रूपमें वर्षीं बाद
तरुणके सामने धर्मसंकट था कि क्या करे? यदि वह	झेन फकीरके गुरुभाई आये। उन्होंने उलाहना दिया कि
स्वदेश लौटता तो जगहँसाई होती और यहाँ रहे तो	अब आनन्द है। चेला काम कर रहा है। फकीरने उत्तर
साधनाका परम पद वृद्धावस्थामें आता। इस विकट	दिया कि तलवार-ध्यान क्या खाक सीखेगा, दूध
स्थितिमें तरुण गुरुके पैरोंमें सिसक-सिसककर रोने	पकानातक नहीं आता। लो, आज तुम और मैं असली
लगा। उसके रोते–रोते भी घण्टों गुजरे। अन्तमें फकीरने	तलवारसे इसकी गलतीकी सजा देंगे। तरुणका ध्यान नंगी
उठते हुए कहा—'देखो, आजसे ही साधना–ध्यान शुरू	तलवारोंके भयसे काँप उठा। उसके हाथ डगमगाये और
करो। उसमें जितना समय लगेगा, लग जायेगा।'	घड़ेसे दूध छलका। दोनों झेन फकीर नंगी तलवार लिये
तरुण आनन्दसे नाचने लगा। तभी फकीरने गुरुतर	मारनेके लिये दौड़े। तरुण अपने बचावमें निहत्था लगा
गम्भीर स्वरमें कहा—'मेरी एक ही शर्त है कि मैं जो	था। वह बचनेपर ध्यान केन्द्रित किये रहा। वह बिजलीकी
कहूँगा, तुम वही करोगे।' तरुणने बिना सोचे-विचारे	तरह हरकतमें आया। तलवारोंकी धारोंसे बचनेके लिये
कहा कि 'हे महात्मन्! मुझे स्वीकार है।' झेन फकीर	अपनी गति तेज की। शरीरको कुशल नटों–सा साधा।
तरुणको कुटियामें ले गये और पवित्र भस्मीसे अभिषेक	वह नंगी तलवारोंपर नृत्य कर रहा था। आखिर उसने
किया। फकीरने आदेश दिया कि आजसे तलवार या	दोनोंको गिराकर उनकी तलवार उन्हींके सीनेपर रख दी।
शस्त्रोंको हाथ नहीं लगाओगे। आश्रमकी गायोंको चराओ	सुखद आश्चर्य यह रहा कि दोनों फकीरोंने ताली बजाकर
और उनका दूध पकाओ। यह कहकर फकीर बिजलीकी	अट्टहास किया! तरुण हतप्रभ हुआ! झेन फकीरने उसके
तरह निकला और देखते-ही-देखते घने वनमें अदृश्य हो	मस्तकको छूकर विश्वका सर्वश्रेष्ठ तलवार ध्यान-साधक
गया। पलक झपकते झेन खापा गाँवके बढ़ईके घर पहुँचा।	घोषित किया। उन्होंने कहा—'हे पुत्र! हमने तुम्हें
बढ़ईसे लकड़ीके दो खाण्डे (तलवारें) बनवायीं। खाण्डोंको	बचावके द्वारा ध्यान-साधनाका महारथी बनाया है। तभी
लिये नाचते-झूमते फकीर आश्रममें प्रकट हुआ। आश्रममें	तुम सर्वश्रेष्ठ तलवारबाजोंको पराजित कर सके। इसे
प्रदोषकालमें तरुण गायोंका दूध निकाल चुका था। उसने	रक्षा-ध्यान कहते हैं।'
─★	>+≻

समरूप रहकर ही क्रोधपर नियन्त्रण

(श्रीविजयजी सिंगल)

मानवीय कष्टोंके विभिन्न कारणोंमेंसे क्रोध एक कामनाकी पूर्ति न होनेसे क्रोध उत्पन्न होता है। क्रोधसे

प्रमुख कारण है। जब कोई अपना आपा खो देता है, भ्रम पैदा होता है, जिससे स्मृतिकी हानि होती है अर्थात्

तो वह अपना विवेक भी खो देता है और ऐसे काम व्यक्ति भूल जाता है कि उचित क्या है और अनुचित

कर बैठता है, जिसके कारण उसे बादमें पछताना पड़ता क्या है। स्मृतिकी हानिके फलस्वरूप बुद्धिमें गिरावट

है। ऐसा अविवेकपूर्ण व्यवहार न केवल सम्बन्धित

व्यक्तिके लिये बल्कि उसके आसपासके अन्य लोगोंके

लिये भी समस्याएँ पैदा कर देता है। भगवद्गीतामें

क्रोधके वशीभूत रहनेवालोंको आसुरी प्रकृतिका और

क्रोधसे मुक्त लोगोंको दैवीय प्रकृतिका कहा गया है।

वास्तवमें श्रीकृष्णने क्रोधको नरकके तीन द्वारोंमेंसे एक घोषित किया है। 'नरकके तीन द्वार हैं—काम, क्रोध

तथा लोभ। इन तीनोंको त्याग देना चाहिये; क्योंकि इनसे

जीवका पतन होता है।' श्रीकृष्णने अर्जुनके साथ अपने संवादमें क्रोधकी

कार्यशैलीका विश्लेषण किया है। यह पूछे जानेपर कि ऐसी कौन-सी शक्ति है, जो व्यक्तिको उसकी अपनी

इच्छाके विरुद्ध भी मानो बलपूर्वक पाप करनेके लिये प्रेरित करती है, श्रीकृष्णने उत्तर दिया कि समस्याका मूल कारण है वासना, जो अतृप्त रहनेपर क्रोधके रूपमें प्रकट होती है।

यह मानव-जातिको सर्वभक्षी और सबसे बडी शत्रु है। वासनाको मनुष्यका सतत शत्रु कहा गया है, क्योंकि

अग्निकी भाँति इसकी भूख कभी भी पूर्णत: तृप्त नहीं होती।

गीतामें क्रोधके बारेमें कहा गया है कि जब कोई व्यक्ति किसी वस्तुके सम्पर्कमें आता है तो उसके लिये

उसके मनमें एक लगाव (राग या द्वेष) विकसित हो

जाता है। वह उस वस्तुको पसन्द या नापसन्द करने

लगता है। ऐसी पसन्द या नापसन्दसे उस वस्तुको पाने

या उससे छुटकारा पानेकी इच्छा उत्पन्न होती है। इच्छाकी पूर्ति न होनेसे क्रोधकी उत्पत्ति होती है।

इन्द्रियोंके विषयोंका चिन्तन करनेसे उनके प्रति आसक्ति

श्रीकृष्णने बार-बार चित्तकी समताके महत्त्वपर

प्रकाश डाला है। जो कोई मनुष्य सफलता-असफलता, हानि-लाभ आदिमें समरूप होकर रहता है, क्रोध उसपर

कभी भी हावी नहीं हो सकता। ऐसा समभाववाला व्यक्ति

[भाग ९६

क्रोध और भय आदिसे मुक्त हो सकता है।

आती है। बुद्धिके नाशके साथ मनुष्यका नाश होता है।

आवश्यक शर्तोंमेंसे एक महत्त्वपूर्ण शर्त घोषित किया

गया है। केवल उसी व्यक्तिकी बृद्धि स्थिर होती है, जो

कि क्रोधसे मुक्त है। श्रीकृष्णने आगे कहा है कि केवल

वही व्यक्ति इस संसारमें सुखी रह सकता है, जो काम

और क्रोधके आवेगोंको सहन करनेमें समर्थ है।

भगवद्गीतामें केवल लक्षणोंको रोकनेके बजाय, इसमें

क्रोधके मूल कारणसे निपटनेपर जोर दिया गया है।

विषयों (जैसे अलग-अलग लोग, धन या सत्ताकी

प्रतिष्ठा इत्यादि)-के सम्पर्कमें आती हैं तो मनुष्यमें

उनको प्राप्त करनेकी आकांक्षा प्रकट होती है। प्रत्येक

इन्द्रिय अपनेसे सम्बन्धित विषयोंके प्रति राग और द्वेषका

भाव रखनेके लिये प्रेरित करती है। श्रीकृष्णने यह

समझाया है कि मनुष्यको पसन्द और नापसन्दका दास

नहीं बनना चाहिये, क्योंकि यह दोनों ही आध्यात्मिक

विकासमें बाधा डालते हैं। दूसरे शब्दोंमें, अपनी पसन्द

और नापसन्दको संयत करके व्यक्ति अपनी इच्छाओं,

जब इन्द्रियाँ भौतिक दुनियासे सम्बन्धित विभिन्न

क्रोधसे मुक्तिको आत्मिक ज्ञान प्राप्त करनेकी

स्वार्थपूर्ण वासनाओं, अनुचित अपेक्षाओं तथा क्रोधके

अकस्मात् विस्फोटसे उत्पन्न परेशानियोंमें नहीं फँसता। उत्पात्तत्वोस्रीतः Dञ्चएसिक् के सम्बन्ध क्रिकार क्रिकेट हैं क्रिकेट हैं क्रिकेट | MADE WITH LOVE क्रिकेट हैं क्रिकेट हैं क्रिकेट हैं क्रिकेट |

कौन-सा मार्ग ग्रहण करें? संख्या ८] कौन-सा मार्ग ग्रहण करें ? (प्रो० श्रीरामचरणजी महेन्द्र) एक महोदय लिखते हैं, 'मैंने आपके अनेक लेख बहुत-से व्यक्ति चोरी करते हुए भी बाहरसे सन्तुष्ट-से और पुस्तकें पढ़ी हैं, पर एक चीज मेरे दिलमें हमेशा प्रतीत होते हैं, पर बुरे कार्योंकी सूक्ष्म रेखाएँ अन्तश्चेतनाके यह खटकती रहती है कि बेईमानी क्यों फलती-फूलती ऊपर अंकित होती रहती हैं और मनपर सदा आघात है?' आप कहते हैं—'लक्ष्मी उसीकी दासी है, जो करती हैं। एक-न-एक दिन पाप प्रकट होता ही है और करनीका फल मिलता ही है। ईमानदारीसे व्यापार या सच्चे मनसे परिश्रम करते हैं।' मैं परिश्रम करता हूँ, सदा ईमानदार रहता हूँ, पर इन ईमानदारीके मार्गके साथ आपको आत्माकी दैवी दोनोंके बावजूद न मुझे लक्ष्मी मिली है और न शान्ति शक्तियोंका भी सहयोग मिलता रहेगा। सच्चे व्यक्तिको ही, सामाजिक प्रतिष्ठा भी प्राप्त नहीं हुई। आखिर कभी किसी गुप्त भेदके प्रकट होनेका कोई भय नहीं बतलाइये मैं अब क्या करूँ ? ईमानदारीके रास्तेमें भूख, रहता। वह तो खरा है। चाहे किसी कसौटीपर चढ़ा विवशता, गरीबी है। परिश्रम और ईमानदारीसे काम लीजिये, सदैव चमकता ही रहेगा। सत्, चित्, आनन्द-कर-करके मैंने अपना स्वास्थ्य खो दिया और साथ ही स्वरूप आत्मा इसीलिये इस भूमण्डलपर भेजा गया है कि लक्ष्मीकी कृपा भी! अब प्रार्थना यह है कि मेरी गुत्थी वह सत्यका ही व्यवहार करे, असत्य या झुठके सुलझा दें कि चोरी, बेईमानी, कालाबाजारी, रिश्वत, अन्धकारसे बचा रहे। जो व्यक्ति यह समझता है कि घूसखोरी और दूसरोंकी आँखोंमें धूल झोंकनेसे क्यों बेईमानीसे लोगोंकी आँखोंमें धूल झोंककर बढ़ता रहेगा, महल खड़े होते जाते हैं और इसके विपरीत सच्चे वह वास्तवमें बड़ी भूल करता है। बेईमानी, चोरी, रिश्वत तो एक प्रकारकी अग्नि है। वह कब छिपती है? उसे चाहे मजदुर, नेकनीयत इन्सान और ईमानदारको क्यों दाने-दानेके लिये तरसना पड़ता है? किसको सच्चा मानूँ? सौ कपड़ोंमें लपेटकर रखा जाय, एक-न-एक समय आपके लेखोंको या समाजके इस उत्थान-पतनको? कपड़ोंको जलाकर प्रकट हो ही जाती है। ईश्वरने आपको ईमानका सम्बन्ध मनुष्यके गुप्त मनसे है। हमारी 'सत्यं शिवं सुन्दरं'से युक्त आत्मा (अर्थात् अपना दिव्य अन्तरात्मा जिस कार्यको उचित कहती है या स्वीकार अंश) इसीलिये दिया है कि आप असत्यसे बचकर करती है, उस आचरणको करनेवाला ईमानदार कहलाता सत्यके, ईमानदारीके, प्रकाशके मार्गको ही ग्रहण करें। है। ईमानदारीसे कार्य करनेमें हमें अन्दरसे ही एक गुप्त बेईमानी चार दिन ही फलती-फुलती-सी दीखती शान्ति और सन्तोषका अनुभव होता है। इसके विपरीत है। वास्तवमें वह अवनतिका ही रूप होती है। दीपक आत्माका हननकर बेईमानीसे कार्य करनेपर हमारा गुप्त जब बुझनेको होता है, तब तेजीसे चमककर शान्त हो मन हमें अन्दर-ही-अन्दर कचोटता रहता है। हमें शान्ति जाता है। इसी प्रकार बेईमानीकी दौलतसे, रिश्वतके धनसे घर-परिवार क्षणभरके लिये समृद्ध प्रतीत होते हैं; नहीं मिलती। हमेशा यह गुप्त भय रहता है कि हमारी बेईमानी या चोरी किसीको किसी दिन किसी भी पर चोरीके प्रकट होते ही वे ऐसे गहरे खड्डेमें गिर पड़ते अवसरपर प्रकट न हो जाय। जैसे जलसे शरीर शुद्ध होता हैं, जिससे निकलना असम्भव हो जाता है। वे दीर्घकाल-है, वैसे ही सत्याचरणसे मन और बुद्धि पवित्र हो जाते हैं। तक असत्यके अन्धकारमें भटकते रहते हैं। अत: हनन की हुई आत्मा ही हमें बेईमानीकी ओर जाने पहलेसे ही ईमानपर टिके रहनेका व्रत ले लेना चाहिये। देती है और दुष्कर्म कराती है। असत्य या बेईमानीके बेईमानीकी दौलत उसीके साथ नष्ट हो जाती है। कार्यद्वारा असत्य कार्य करने, रिश्वत, घूस, चोरबाजारी क्या आपने किसी बेईमानकी सन्तानको फलते-फूलते आदि चोरियाँ करनेसे धीरे-धीरे हमारी अन्तरात्मा मर देखा है ? अगर बेईमान फलते-फूलते रहते, तो इस जाती है। हनन की हुई आत्मामें सत्य-असत्य, धर्म-संसारमें सभी बेईमानी, ठगी और चोरीपर आ जाते। सत्य अधर्म, उचित-अनुचितका विवेक नहीं रहता। अत: संसारसे लुप्त हो जाता, केवल पाप ही रहते। चोरों,

आचरण और खरे पसीनेकी कमाईसे ही शुद्ध भोजन गरीब होकर भी पूजे जाते हैं; झूठे और बेईमान अमीर होकर भी तिरस्कृत होते हैं। चोरकी झोपड़ीपर कभी प्राप्त होता है। जिसे कमाते और खाते दुनियाके किसी फ्रॅंसतक नहीं रहता। ईमानदारीके एक पैसेमें बेईमानीके लाख रुपयेसे अधिक बल है; क्योंकि वह स्थायी है। उस पैसेके साथ सत्कर्मका गौरव जुड़ा हुआ है।

आप सत्यके यात्री हैं। सत्य-स्वरूप आत्मा हैं।

झूठ और मिथ्याचारके सुहावने दीखनेवाले भयानक

जंगलोंमें मत भटिकये। ईमानदारीकी सूखी रोटियाँ खाते

रहिये, तो स्वस्थ रहेंगे। बेईमानीका हलुआ-पूरी आपका

स्वास्थ्य नष्ट कर देगा। अधर्मसे धन जमा करके

सम्पत्तिशाली बननेकी अपेक्षा यही अच्छा है कि मनुष्य

ठगों, डकैतों और राक्षसोंका नित्य राज्य हो जाता।

हमारा समाज निठल्ले कामचोरोंसे भर जाता। पर

ईश्वरका नियम ही कुछ ऐसा है कि सच्चे और ईमानदार

सत्य आचरण करता हुआ गरीब बना रहे। जो पैसा दूसरेको रुलाते हुए हड्प लिया जाता है, वह लेनेवालेको नष्ट करके ही विदा होता है। सत्यता और ईमानदारी धर्मात्मा मनुष्यके भूषण हैं। ये ईश्वरकी सत्ताके द्योतक हैं। प्राणान्त होनेपर भी इन

कपटसे कमायी हुई है, तो उसपर पलनेवाली हमारी सम्पूर्ण जीवन ही ईश्वरकी पूजा बन जाय (स्वामी श्रीसच्चिदानन्देन्द्र सरस्वतीजी महाराज) प्रात:काल एक घण्टा पूजा, सायंकाल पन्द्रह मिनट

यदि हमारी आजीविका झूठ, अन्याय, छल,

दिव्य गुणोंका ह्रास मत होने दीजिये।

मंगला आरती-इतना छोड़कर अन्य शेष समय पूर्ण रूपसे सांसारिक व्यवहारमें ही व्यर्थ हो रहा है। ऐसी

परिस्थितिमें मुझे कौन-सी साधना उपलब्ध हो जायगी? यह प्रश्न आज सबके सामने है। मेरी भावना यही है कि इस समय जनताका अधिकांश समय लोक-व्यवहार ही

निगल रहा है। इसके लिये यह लेख एक निर्देशन है। हम जो समय लोक-व्यवहारमें लगाते हैं, उसके अनुरूप हमें फल प्राप्त होता है—यह एक गलत समझ व्यक्तिके सामने आँखें नीची न करनी पडे, वही ईमानदारीकी कमाई है। यह हमें आत्मनिर्भर रहना सिखाती है और स्वाभिमानकी वृद्धि करती है। एक विद्वानुके ये वचन सदा स्मरण रखनेयोग्य हैं,

सन्तान भी उसका उपयोग करनेपर अधिकाधिक अन्याय,

झुठ और धूर्तताकी ओर प्रवृत्त होती जायगी और हमारी

आनेवाली पीढ़ीको भी दुखी बना डालेगी। अतएव सत्य

भाग ९६

'तुम्हारा मन जब ईमानदारीको छोड़कर बेईमानीकी ओर चलने लगे, तब समझना चाहिये कि अब तुम्हारा सर्वनाश निकट आनेवाला है। बेईमानीसे पैसा मिल सकता है, पर देखो, सावधान रहना। उस पैसेको छूना मत! क्योंकि वह आगकी तरह चमकीला तो है, पर छुनेपर जलाये बिना नहीं रहता।ईमानदारीसे चाहे थोड़ी ही सम्पत्ति भले ही कमायी

गिर जाते हैं। एक दिन वह अवश्य उन्नति करेगा, जो दूसरोंके लाभको अपने ही लाभकी तरह देखेगा। यह मत समझो कि ईमानदारको भोंदू और अकर्मण्य समझा जायगा। मुर्ख ही ऐसा ख्याल कर सकते हैं। विवेकवानोंकी दुष्टिमें न्यायशील और ईमानदार आदमी ही बड़ा समझा जायगा, फिर चाहे वह गरीब ही क्यों न हो।'

जाय, पर वह पीढ़ियोंतक कायम रहेगी और बढ़ती रहेगी,

जबिक बेईमानीके विशाल वृक्ष एक ही झोंकेमें उखड़कर

रहता है। हमारा कर्तव्य इतना ही है कि हमें काम करना है। उसके लिये प्रतिफल देकर हमारा योगक्षेम रखनेका

कार्य ईश्वरका है।

केवल भगवान्की पूजा करनेके लिये आपके पास

कालावकाश है। अधिक परमार्थ-साधनाके लिये भी

कालावकाश नहीं है। इस विषयको ज्यों-का-त्यों

स्वीकार करके यह उत्तर लिखता हूँ, देवपूजार्थ आवश्यक

फूल, तुलसी, गन्ध, धूप, दीप—इत्यादि सामग्रियोंमें भी

आप ईश्वर-सम्बन्ध जोडनेका अभ्यास करें। अपने ऑंगनके अल्प भागमें सुन्दर पूजाके योग्य फूलोंके पौधे

है; क्योंकि हमारे लिये मिलनेवाला प्रतिफल हमारे श्रमके अनुगुण नहीं रहता है, बल्कि ईश्वरके अनुग्रहके अनुरूप लगाकर, स्वयं ही उनमें पानी दें, परिवारवालोंमें भी उस परिपूर्ण परिमल (सुगन्धित) जीवन ही ईश्वरका अनुग्रह है। फूल यह सन्देश सबके लिये सर्वदा देते रहते हैं। फूलोंके जैसे ही हमारा शरीर और मन भी बने, हमारे शरीर और मन सहज प्रकारसे हमारे मूल स्थान जो परमेश्वर हैं, उनके संकल्पके अनुरूप हो जायँ। इसे वैसे विधिसे मनमें प्रार्थना करते रहना चाहिये।

ही निर्मल एवं परिशुद्ध करना चाहिये, जैसे निर्मल एवं परिशुद्ध पुष्प होता है। हम जो लाये हैं, उन फूलोंको परिशुद्ध भावनासे ईश्वरकी पूजाके समय अर्पण करना चाहिये। उस अर्पणकालमें—'हे देव, इस हृदयको तुमको अर्पण कर रहा हूँ, मेरे पास कुछ भी नहीं है। ऐसा मुझे बनाओ कि मैं तेरे संकल्पके अनुरूप जीवन-यापन करूँ, सर्वदा आपमें रहते हुए मैं आपके अनुग्रहसे सुख-शान्ति प्राप्त करके आसपासके लोगोंको भी सुख-शान्तिका मार्गदर्शन करूँ, ऐसा अनुग्रह करो।' इस इसी प्रकार जो ध्रपबत्ती हम परमेश्वरको अर्पण करते हैं, वह भी हमारे जीवनका संकेत होना चाहिये। कंजूसी करते हुए एक छोटी-सी अगरबत्तीको जलाकर कहीं दीवारके कोनेमें लगानेके अभ्यासको छोड देना चाहिये। दशांग चूर्णको अंगारमें रखकर सुगन्धित धूपको अर्पण करनेकी परम्परा हृदयकी औदार्यबुद्धिको बढ़ाता है। हमें धूपके द्वारा आसपासके अन्य प्राणियोंको भी दयामय परमेश्वरसे सम्बन्धको स्मरण कराना है। भगवान्के सामने घीका दीपक जलाते समय यह बात याद आनी चाहिये कि स्वयंप्रकाशरूप परमेश्वरसे चेतनरूप हम

सब आये हैं और हमारी जीवनज्योति सुख-शान्तिसे

अन्वित होकर आगे बढ़ रही है, यह उन्हींकी कृपा

हम जो तैयार कर रहे हैं, वह भोजन हमारी

है। इसके लिये भक्ति नामका घी ही मूल है।

सुगन्धि, यह सब मनुष्यके लिये ही है—ऐसी भावना आजकल लोगोंमें तेजीसे बढ़ रही है। पंचभूतसे बनी प्रकृतिको दास बनाकर ही मनुष्य सुखको लूटना चाहता है। परंतु यहाँ हमें धोखेमें फँसनेकी सम्भावना ही अधिक है, क्योंकि यथार्थमें प्रकृति परमेश्वरके वशमें है। केवल अनुग्रहके द्वारा ही हम इह-परसुखके लिये आवश्यक सामग्रीको भी प्रकृतिसे प्राप्त कर सकते हैं।

परंतु जब हम परमेश्वरको विस्मरण करके अहंकारकी

पूजा आरम्भ करते हैं, तब वह प्रकृति ही माया बनकर

हम लोगोंको गलत रास्तेकी तरफ खींच लेती है। तब

यहाँ हमको इह सुखके लिये आवश्यक सामग्री भी

उपलब्ध नहीं होती। मिलनेपर भी उससे हमको जो

उपभोग प्राप्त होना चाहिये था, वह गायब हो जाता है।

अर्पित फल-फुल, गन्ध इत्यादिके सेवनके द्वारा हम तेरी

मायाको जीतनेकी क्षमता प्राप्त करें।' इस वाक्यके

अभिप्रायको हम सबको ठीक-ठीक याद रखना चाहिये।

इस लोकमें उत्पन्न वस्तुओंके द्वारा उत्पन्न कर्णसुखद

शब्द, सुखप्रद स्पर्श, सुन्दर रूप, जिह्वाको आकर्षित

करनेवाला स्वाद, नाकको वशमें रखनेवाली परिमल-

आप प्रात:काल जो पूजा कर रहे हैं, उसको नित्य व्यवहारके लिये आप संकेत बनाइये। आप चाहे किसी भी व्यवहारमें लग जाइये, वहाँ आपको उपलब्ध होनेवाली सामग्री और सुविधा भी परमेश्वरकी आराधनाके लिये उपकरणमात्र है। इतना ही नहीं, आपका सम्पूर्ण जीवन ही ईश्वरकी आराधना है—इस प्रकार सतत भावना करिये। आपके लिये आवश्यक जो सुख-शान्तिका भोग है, वह तो ईश्वरको अर्पण करके उससे प्रसादरूपसे प्राप्त भोग है-ऐसी भावना निरन्तर चलाते रहिये। इसके

अतिरिक्त और कोई भी साधनाकी आवश्यकता नहीं है।

(श्रीप्रदीपकुमारजी) गया है। (३) मस्तकपर उलटे गिरगिटकी तिकोनी पूँछ

रुद्रेश्वर महादेव

तीर्थ-दर्शन-

(४) नाकको उलटे गिरगिटके मुखसे प्रदर्शित इंगित किया गया है। गयी हैं।

छत्तीसगढ्के जिला बिलासपुर मुख्यालयसे २७ कि०मी० की दूरीपर रायपुर राजमार्गपर भोजपुर ग्राम

कि॰मी॰ जानेपर ग्राम ताला स्थान है, जो नियारी नदीके किनारेपर बसा है। इसी स्थानपर रुद्रेश्वर महादेवकी

स्थित है। इसके अन्दर एक सँकरी सड़कद्वारा ७

अद्भुत प्रतिमा अवस्थित है। मन्दिर पूर्णतया नष्ट हो चुका है, पर महादेवकी यह अद्भृत प्रतिमा तालाबन्द कक्षमें पुरातत्त्व विभागने रिक्षित कर रखी है। यह

प्रतिमा पूर्णतया अपने प्राचीन मूलरूपमें विद्यमान है। रुद्रेश्वर महादेवकी यह अद्भुत प्रतिमा लगभग ९ फीट ऊँची एवं ५ टन वजनी है तथा विशाल

आकृतिकी है। यह शिवप्रतिमा अबतककी ज्ञात समस्त

प्रतिमाओंमें विशिष्ट कोटिकी है। इस मूर्तिमें जीव-जन्तुओंको बड़ी ही सूक्ष्मतासे उकेरकर सम्भवत: उसके गुणोंके सहधर्मीके प्रतीकके रूपमें प्रतिमाके विभिन्न

अंग निर्मित किये गये हैं, जैसे— (१) सिरका भाग पगड़ीनुमा सर्पकी कुण्डलीके

महादेवके त्रिनेत्रको प्रदर्शित कर रही है।

किया गया है। (५) भौंहोंको उलटे गिरगिटके पिछले पैरोंसे

(६) दोनों मूँछें—दो मछलियोंद्वारा प्रदर्शित की

(७) ठोड़ी केकड़ेद्वारा प्रदर्शित है। (८) आँखें सिंहकी आँखोंकी तरह प्रदर्शित हैं। (९) पलकें मेढककी आकृतिद्वारा निर्मित हैं।

(१०) पुतलियाँ अण्डोंद्वारा प्रदर्शित हैं। (११) वक्ष:स्थल दोनों ओर मूँछोंयुक्त मकर-रूपमें है।

(१२) उदरभाग एक बड़े कुम्भकी आकृतिमें है। (१३) मगरमच्छद्वारा दोनों कन्धोंको प्रदर्शित किया गया है।

(१४) गैंडेकी तरह सुदृढ़ भुजाएँ निर्मित की गयी हैं। (१५) पंचमुखी नागके समान उँगलियाँ दर्शायी

गयी हैं।

(१६) चार युवतियोंके रूपमें कमर एवं कटिप्रदेश प्रदर्शित किया गया है।

(१७) सिंहके मुखके रूपमें दोनों घुटने प्रदर्शित किये गये हैं। (१८) घंटाकाररूपमें अण्डकोष प्रदर्शित हैं।

गया है।

(१९) लिंग कछुएके मुखद्वारा प्रदर्शित किया

प्रांगणमें ही देवरानी-जेठानीके मन्दिर पूर्णतया भग्नावशेषके रूपमें अवस्थित हैं, पर महादेवके मन्दिरका

रूपमें उकेरा गया है। कहीं कोई निशान नहीं है। पुरातत्त्व विभाग इन प्रांगण तथा नदीके किनारेके भागोंको सुन्दर बगीचेमें विकसित कर दिया है, अत: यह एक सुन्दर पिकनिक

पहुँचनेका मार्ग एवं ठहरनेका स्थान—हवाई

मार्गहेतु रायपुर हवाई अड्डा है, जहाँसे बिलासपुर ११७

कि०मी० दूर है। एक छोटा हवाई अड्डा बिलासपुरमें भी

संख्या ८]

संत-चरित

हुआ था।

स्पॉट बन गया है।

है। रायपुरसे निरन्तर २४ घण्टे बसें बिलासपुरको जाती

गृहस्थ सन्त परम भागवत पण्डित मिहीलालजी

(श्रीराजकमलजी मिश्रा)

गृहस्थ सन्त परम भागवत पण्डित मिहीलालजी

अलीगढ़ जिलेके अन्तर्गत मुरसानसे करीब ३ मील दुर पिथा नामक ग्राममें पूज्य पण्डितजीके पितामह

पण्डित नेकरामजी भगवान् श्रीकृष्णके अनन्य भक्त, संस्कृतके अच्छे विद्वान् तथा भागवतके अनन्य प्रेमी

निवास करते थे। पूज्य पण्डितजीके पिताका नाम पण्डित कीरतरामजी एवं माताका नाम गौरा देवी था। इसी भक्त परिवारमें परम भागवत पण्डित मिहीलालजीका जन्म

कालान्तरमें किन्हीं कारणवश पूज्य पण्डितजीके पूर्वज आगरा जिलेके अन्तर्गत ट्रण्डलाके पास चूल्हावली ग्राममें आकर बस गये और वहीं रहने लगे। इसी कारण

बीतने लगे। पुज्य पण्डितजी अध्यापक थे। अतः उनका ट्रांसफर (स्थानान्तरण) ग्राम खतौली जिला आगराकी पाठशालामें हुआ। वहींपर प्रधानाध्यापक पण्डित रेवतीरामने

समर्थ गुरु परम सन्त डॉक्टर चतुर्भुज सहायजीके दर्शन कराये। उस प्रथम दर्शनके बारेमें पण्डितजी लिखते हैं

और कुछ देर अपनेको भूल एक विचित्र दशामें चला

हैं। रेलमार्गसे यह मुम्बई-हावड़ा लाइनोंके मध्य एक

बडा जंक्शन है। यह भोपाल, दिल्ली तथा भारतके सभी

मुख्य नगरोंसे जुड़ा है। बिलासपुरसे सीधी बसें तालातक

जाती रहती हैं। निजी वाहनसे जाया जा सकता है।

ठहरनेके स्थान बिलासपुरमें ही हैं। अत: वहीं ठहरना

चाहिये। ताला ग्राममें न तो ठहरनेकी व्यवस्था है और

न ही खान-पानकी। केवल चाय-नाश्ता ही मिलता है।

पण्डितजीका साधनामय जीवन अधिकतर चूल्हावलीमें ही बीता। अन्त समयमें वह ट्रण्डलामें आकर बस गये। वह हमेशा प्रभुसे अत्यन्त दुखी होकर सच्चा मार्ग बतानेकी प्रार्थना करते थे। सच्चे महात्माकी खोजमें दिन

कि 'उनके उन्नत ललाट, प्रकाशयुक्त चेहरेको देखकर मेरे हृदयमें प्रेम उमड़ पड़ा और मैंने जब उनके चरण स्पर्श किये तो उसी क्षण मेरा सारा दु:ख दूर हो गया

गया। इसके उपरान्त कुछ देर साधन कराया। मेरे हृदयपर अपना हाथ रख बतलाया, यह हृदय स्थान है। आप यहीं भगवान्का ध्यान कीजिये। उनके करकमलके

स्पर्शसे ही प्रकाशकी एक विद्युत्-सी दौड़ गयी और उसका प्रभाव तीन दिनोंतक बना रहा।' उन्होंने कहा यह

विद्या बताने तथा समझानेसे नहीं आती, मिलने-जुलने एवं साथ बैठनेपर ज्यादा आती है। बादमें उनकी साधना

गुरुकृपासे इतनी ऊँची हो गयी कि एक दिन साधकोंने देखा कि इधर-उधरसे चींटियाँ उनपर आकर चढने

लगीं, जब ध्यान समाप्त हुआ तो साधकोंने देखा कि चींटियाँ आकर उनपर चढ़ी हुई हैं और वह वैसे ही ध्यानमग्न बैठे हैं। गुरुकी कृपादृष्टिसे वे दिनों-दिन

िभाग ९६ अध्यात्मकी उच्च सीढ़ियोंपर बढ़ते रहे। भारतके प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसादजीने २९ उनका हृदय हमेशा दूसरोंको देखकर द्रवित हो दिसम्बर सन् १९६२ ई० को परम पूजनीय पण्डितजी जाता था। उन्होंके जीवनकी एक घटना है, उनके गाँवमें महाराजसे मिलनेकी इच्छा प्रकट की। सदाकत आश्रम, एक मेहतर रहता था। उसके पास खानेको अन्न नहीं, पटनामें पण्डितजीसे भेंट हुई तो राजेन्द्र बाबूने पूछा, पहननेको वस्त्र नहीं, और रहनेको घर नहीं, ऐसी 'आपके यहाँ क्या होता है ?' पण्डितजीने सादगीसे उत्तर गरीबीमें उसने अपना एक मोहल्ला जहाँ वह कमाई दिया 'कुछ नहीं, केवल चित्त शान्तिका उपाय बताया करता था, २५ रुपयेमें गिरवी रख दिया। परम पूजनीय जाता है।' इसके बाद डॉ॰ राजेन्द्र बाबू बोले, 'तीन-पण्डितजी महाराजके पास आयका एकमात्र साधन चार दिनोंका समय हमें भी दीजिये।' अत: १६ जनवरीसे छोटी-सी नौकरीका था, जिसे वे पहले ही छोड चुके १९ जनवरी १९६३ का समय उनके पास रहनेका थे और उस जमानेमें २५ रुपये जुटाना कोई साधारण निश्चित किया गया, जहाँ पण्डितजी महाराजने उनको खेल नहीं था। फिर भी उन्होंने जैसे-तैसे प्रबन्ध करके साधना और ध्यान कराया। उस समय डॉक्टर राजेन्द्र उस मेहतरका मोहल्ला गिरवीसे मुक्त कराकर उसका बाबूने कहा, 'मुझे बड़ा दु:ख है कि यह चीज मुझे बड़ी देरसे मिली है, यदि पहले मिलती तो आज समाजका दु:ख दुर कर दिया। १९६० ई० में वे विश्व-धर्म-सम्मेलनमें भाग लेने नक्शा कुछ और होता।' कोलकाता गये, जहाँ विश्वके समस्त धर्मींके प्रतिनिधि पण्डितजीने अपने नामके आगे सन्त, परमसन्त आये हुए थे। जब मन्त्री महोदयका ध्यान इनकी ओर लिखा जाना कभी पसन्द नहीं किया। जब कोई इन आकृष्ट किया गया, जो रामाश्रम सत्संग मथुराका उपाधियोंसे उन्हें सम्बोधित करता या पर्चेमें लिखा देता प्रतिनिधित्व कर रहे थे, तो इनको ५ मिनटका समय तो नाराज होते और कहते कि मैं कोई महात्मा नहीं, दिया गया। विशाल जनसमूहको सम्बोधित करते हुए मैं सन्त अथवा गुरु भी नहीं हूँ। मुझे इन आभूषणोंको पण्डितजी बोले, 'एक पिताके चार पुत्र थे, अपने-अपने पहनना अच्छा नहीं लगता। कार्यके लिये देश-विदेश चले गये। वहाँ जाकर उन्होंने बराये नाम भी अपना नहीं बाकी निशाँ रखना, वहींकी भाषा सीख ली और वहींका पहनावा ले लिया। न तन रखना, न मन रखना, न जी रखना, न जां रखना। बहुत दिनों बाद वे मिले, परंतु एक-दूसरेको पहचान न इस तरह आपने अपने नाम तथा हस्तीको इतना सके, इससे आपसमें प्रेम पैदा नहीं हुआ। अध्यात्म वह मिटाया कि देखनेवाले उन्हें ठीकसे समझ नहीं पाते थे, है, जो यह पहचान करा दे कि वे सब एक ही पिताके इस कारण कभी-कभी लोग आपको पहचाननेमें भूल पुत्र हैं, ताकि वे आपसमें प्रेम करने लगें। विज्ञान जितना कर जाते थे। एक बार कोलकातासे आप ट्रेनसे वापस आ रहे थे। ऊँचा उड़ रहा है, उतने ही उसके पंख भी जल रहे हैं। तीसरे दर्जेके डिब्बेमें बैठे थे, साथमें कुछ अन्य लोग जो धरतीके इंसानको कहींसे शान्ति नहीं है। धर्मग्रन्थ, महापुरुष और महात्मा लोग शान्तिके सिद्धान्त तो आपसे परिचित नहीं थे, वह भी यात्रा कर रहे थे। उन्होंने बतलाते हैं, परंतु यह नहीं कहते कि शान्ति सिद्धान्त नहीं देखा कि रास्तेके हर स्टेशनपर कुछ स्त्री-पुरुष आपसे मिलने आते, जिसमें उनके परिचित कुछ रेल अधिकारी एक स्थिति है और जबतक मनुष्य इस स्थितिमें नहीं आयेगा, जीवनमें शान्ति नहीं प्राप्त कर सकता और बिना भी थे। कई स्टेशन निकल जानेके बाद सहयात्रियोंमेंसे शान्तिके जीवनमें व्यवहार भी अच्छा नहीं बन सकता। एकने पूछा, 'आप कौन हैं ? आप अधिकारी मालदार तो यह दुनिया सुन्दर व्यवहारकी भूखी है, मीठे शब्दोंकी नहीं लगते; क्योंकि तीसरे दर्जेके डिब्बेमें सफर कर रहे हैं। प्यासी है। जो ज्ञान इस व्यवहारको नहीं सिखाता, वह आप विद्वान् भी नहीं लगते; क्योंकि आपकी भाषा कौडी दामका भी नहीं है।' साधारण है। आप नेता भी नहीं लगते: क्योंकि आपका

गृहस्थ सन्त परम भागवत पण्डित मिहीलालजी संख्या ८] जयकारा भी नहीं लग रहा है और आप सन्त या महात्मा रहा है। उसके बदनपर कुर्तातक नहीं है, बस उसे भी नहीं लगते; क्योंकि आपकी वेशभूषा साधारण है। बुलाया और अपना कुर्ता उसे पहना दिया, स्वयं फिर आप कौन हो ?' आपने कहा कि भाई! यह लोग यह बनियानपर कोट पहनकर आ गये। ऐसे ही एक बार देखने आते हैं कि भारतमें ऐसा भी कोई आदमी है, जिसे एक धोबी बहुत बीमार था, उसके पास ओढ़नेको वस्त्र कुछ भी नहीं आता। नहीं था। उसे अपना कम्बल उढ़ा आये, पर रातमें उसे जब लोग उनकी अधिक प्रशंसा करने लगते या किसीने चुरा लिया। प्रातः जब देखने गये तब पता चला कहते कि लाखों आदमी आज आपकी पवित्र वाणी तो उसे दूसरा कम्बल उढ़ा आये। दूसरे दिन भी यही सुनकर अपना जीवन पवित्र एवं भगवद्भजनमें लगा रहे हुआ, तो उसे अपनी रजाई उढा आये। हैं तो आप कहते कि यह आप लोगोंका भ्रम है। मैं तो चुपचाप यथासम्भव सभी दुखी प्राणियोंकी सहायता रास्तेका एक पत्थर था, जो कोई भी आता, ठोकर मारता करते थे, पर उसको ज्ञान ना हो ऐसी कोशिश हमेशा था। एक कलाकार (समर्थ गुरु परम सन्त डॉक्टर रखते थे। वह कहा करते थे कि किसीसे घुणा न करो चतुर्भुज सहायजी)-की इस पत्थरपर नजर पड़ गयी। और पाप तो क्षमा भी किये जा सकते हैं, पर जो किसीसे उन्होंने इस पत्थरको काट-छाँटकर एक मूर्ति बनायी। घृणा करता है, वह ईश्वरको प्राप्त नहीं कर सकता है। उस मूर्तिकी अगर मन्दिरमें पूजा हो रही है, तो यह उस ऐसे ही अनेक घटनाएँ उनके जीवनकी हैं, जो यह मूर्तिको नहीं बल्कि मूर्तिकार (कलाकार)-की पूजा हो बताती हैं कि इतने उच्च शिखरपर भगवद्दर्शन किये हुए रही है। ऐसे वह अनामी ही बने रहे। उन महान् सन्तने कभी भी अपनेको बड़ा न मान हिन्दू, सन् १९७४ की बात है, पूज्य पण्डितजी रामेश्वरम् मुसलमान, सिख, ईसाई, ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र, वैश्य सबमें एवं कन्याकुमारीकी यात्रापर पहुँचे। वहाँ समुद्रके बीचमें उस परम पिताका दर्शनकर अपनेको सदैव एक साधारण प्राणी माना, जिस कारण वह परम भागवत कहलाने लगे। जो विवेकानन्द दरबार बना हुआ है, उसमें ध्यान मण्डपका एक कक्ष है। पण्डितजीने कहा, 'चलो, यहाँ आपने किसीसे कोई मन्त्र, जप, पूजा-पाठ कोई थोड़ी देर ध्यान कर लें।' साथवाले भाइयोंने बताया कि इष्ट या गुरु छोड़नेको कभी नहीं कहा। जो जिस

उस समय उस मण्डपमें कोई नहीं था, पर ध्यान करनेके थोड़ी देर बाद फड़-फड़की आवाज हुई और कुछ लोग आकर बैठ गये। साथवाले भाइयोंने आँख खोलकर देखा तो कमरा लोगोंसे भरा हुआ था और सभी लोग आँख बन्द करके ध्यान कर रहे थे। जब ध्यान बन्द हुआ तो फिर वैसे ही शब्द करते हुए वे सब लोग बाहर निकल गये। पूरी विवेकानन्द शिलाको छान लिया गया, पर कोई नहीं मिला। जब रामकृष्ण मिशनके स्वामीजीसे

भेंट हुई, तो उन्होंने बताया कि ऐसे महापुरुषोंके

मनुष्य-शरीरमें आ जाते हैं।

हालतमें मिला, अपने प्रेम तथा सेवाभावसे उसको वहींसे शान्तिका सन्देश दे उसका जीवन बदल दिया। आपका जीवन 'सेवा करो एवं सेवा लेनेसे बचो' का था, जिसे आपने अपने जीवनमें करके दिखा दिया। आप दीन तथा समाजसे ठुकराये हुएको गलेसे लगाकर

शान्ति एवं आनन्दका अनुभव करा देते थे। सत्संगमें जानेके लिये कभी-कभी आप प्लेटफार्मकी जमीनपर बैठ घण्टों ट्रेनका इंतजार करते थे। कभी-कभी रिक्शा, तांगा, बैलगाड़ी या साइकिलसे भी सत्संगमें

सत्संगका लाभ उठानेके लिये कभी-कभी देवता भी जानेके लिये सफर करनेसे गुरेज नहीं करते थे। उनका विशेष जोर साधनके साथ-साथ व्यवहारपर एक समयकी बात है, बिहारका सत्संग प्रोग्राम था। वह कहा करते थे कि व्यवहार ही परमार्थकी कसौटी करके पूज्य पण्डितजी वापस लौट रहे थे। जाड़ेके दिन है, जिसको उन्होंने अपने जीवनमें पग-पगपर उतारकर

थे, स्टेशनपर उन्होंने देखा कि एक भिखारी ठण्डसे काँप दिखाया कि गुरुका सच्चा शिष्य कैसा होना चाहिये। अनजाने कर्मका फल

एक राजा ब्राह्मणोंको एक ओर महलके आँगनमें मृत्युके पापका फल इस महिलाके खातेमें जायगा और भोजन करा रहा था। राजाका रसोइया खुले आँगनमें इसे उस पापका फल भुगतना होगा। यमराजके दुतोंने पूछा—'प्रभु ऐसा क्यों?'

भोजन पका रहा था। उसी समय एक चील अपने पंजेमें एक जिंदा साँपको लेकर राजाके महलके ऊपरसे

गुजरी। पंजोंमें दबे साँपने अपनी आत्मरक्षामें चीलसे बचनेके लिये अपने फनसे जहर निकाला। रसोइया जो भोजन ब्राह्मणोंके लिये पका रहा था, उस भोजनमें

साँपके मुखसे निकली जहरकी कुछ बूँदें गिर गयीं। किसीको कुछ पता नहीं चला। फलस्वरूप वे सारे ब्राह्मण जो भोजन करने आये थे, उन सबकी जहरीला भोजन करते ही मौत हो गयी। अब जब राजाको सारे

ब्राह्मणोंकी मृत्युका पता चला, तो ब्रह्महत्या होनेसे उसे बहुत दु:ख हुआ। ऐसेमें अब ऊपर बैठे यमराजके लिये भी यह

फैसला लेना मुश्किल हो गया कि इस पाप-कर्मका फल

किसके खातेमें जायगा? १. राजा-जिसको पता ही नहीं था कि खाना

जहरीला हो गया है।

२. रसोइया-जिसको पता ही नहीं था कि खाना बनाते समय वह जहरीला हो गया है।

३. चील—जो जहरीला साँप लिये राजाके महलके ऊपरसे गुजरी। या

४. वह साँप—जिसने अपनी आत्मरक्षामें जहर निकाला।

बहुत दिनोंतक यह मामला यमराजकी फाइलमें अटका रहा। फिर कुछ समय बाद कुछ ब्राह्मण राजासे

मिलने उस राज्यमें आये और उन्होंने किसी महिलासे

महलका रास्ता पूछा। उस महिलाने महलका रास्ता तो

बता दिया, पर रास्ता बतानेके साथ-साथ ब्राह्मणोंसे ये भी कह दिया कि 'देखो भाई!''' जरा ध्यान रखना'''

वह राजा आप-जैसे ब्राह्मणोंको खानेमें जहर देकर मार देता है।'

बस जैसे ही उस महिलाने ये शब्द कहे, उसी

कोई भूमिका भी नहीं थी।

तब यमराजने कहा—दूतो! ध्यान दो, जब कोई

जब कि उन मृत ब्राह्मणोंकी हत्यामें उस महिलाकी

व्यक्ति पाप करता है, तब उसे बड़ा आनन्द मिलता है। पर उन मृत ब्राह्मणोंकी हत्यासे न तो राजाको आनन्द

साँपको आनन्द मिला और न ही उस चीलको आनन्द मिला। पर उस पाप-कर्मकी घटनाका बुराई करनेके

मिला, न ही उस रसोइयेको आनन्द मिला, न ही उस

भावसे बखानकर उस महिलाको जरूर आनन्द मिला।

इसलिये राजाके उस अनजाने पाप-कर्मका फल अब इस महिलाके खातेमें जायगा।

बस, इसी घटनाके तहत आजतक जब भी कोई

व्यक्ति जब किसी दूसरेके पाप-कर्मका बखान बुरे भावसे करता है, तब उस व्यक्तिके पापोंका हिस्सा उस बुराई

करनेवालेके खातेमें भी डाल दिया जाता है। अक्सर हम सोचते हैं कि हमने जीवनमें ऐसा कोई

पाप नहीं किया, फिर भी हमारे जीवनमें इतना कष्ट क्यों आया?

ये कष्ट और कहींसे नहीं, बल्कि लोगोंकी बुराई करनेके कारण उनके पाप-कर्मोंसे आया होता है, जो

बुराई करते ही हमारे खातेमें ट्रांसफर हो जाता है। समात्रतिस्त्रात्ते ठौडस्टिन्तो डिह्नर्गर्शनित्त्त्व इस्तृतिहस्तु हेन्तु । MADE WITH LOVER प्रिक्तात्ते उत्तरिकारी

भारतीय संस्कृतिकी मूलाधार—गौ संख्या ८] भारतीय संस्कृतिकी मूलाधार—गौ (गोरक्षपीठाधीश्वर योगी श्रीआदित्यनाथजी महाराज, मुख्यमन्त्री उत्तरप्रदेश सरकार) गौ प्राचीन कालसे ही भारतीय धर्म और संस्कृति-**'गोब्राह्मणहितार्थाय देशस्यास्य सुखाय च'** के पवित्र संकल्पकी पूर्तिके लिये ही उद्घोषित किया था। गायके सभ्यताकी मूलाधार रही है। भारतीय संस्कृतिने प्राचीन कालसे ही गोभक्ति, गोपालनको अपने जीवनका सर्वोत्कृष्ट प्रति भारतीय भावना कितनी श्रद्धा और कृतज्ञतासे ओत-कर्तव्य माना है। वेद-शास्त्र, स्मृतियाँ, पुराण तथा प्रोत थी, यह इस श्लोकसे स्पष्ट होता है— इतिहास गौकी उत्कृष्ट महिमाओंसे ओत-प्रोत हैं। स्वयं गावो ममाग्रतो नित्यं गावः पृष्ठत एव च। वेद गायको नमन करता है-गावो मे सर्वतश्चैव गवां मध्ये वसाम्यहम्॥ पुराणोंमें पद-पदपर गौकी अनन्त महिमा गायी अघ्ये ते रूपाय नमः। हे अवध्या गौ! तेरे स्वरूपको प्रणाम है। ऋग्वेदमें गयी है। भारतीय संस्कृति ही नहीं, अपितु सारे विश्वमें गौका बड़ा सम्मान था। जैसे हम गौकी पूजा करते कहा गया है कि जिस स्थानपर गाय सुखपूर्वक निवास करती है, वहाँकी रजतक पवित्र हो जाती है, वह हैं, उसी प्रकार पारसी लोग साँड़की पूजा करते हैं। मिश्रके प्राचीन सिक्कोंपर बैलोंकी मूर्ति अंकित रहती स्थान तीर्थ बन जाता है। हमारे जन्मसे मृत्युपर्यन्त सभी संस्कारोंमें पंचगव्य और पंचामृतकी अनिवार्य अपेक्षा है। ईसासे कई वर्ष पूर्व बने हुए पिरामिडोंमें बैलोंकी रहती है। गोदानके बिना हमारा कोई भी धार्मिक कृत्य मूर्ति अंकित है। सम्पन्न नहीं होता। गौ अपनी उत्पत्तिके समयसे ही भारतीय संस्कृति यज्ञ-प्रधान है। वेद, रामायण, महाभारत आदि धार्मिक तथा ऐतिहासिक ग्रन्थोंमें यज्ञको भारतके लिये पूजनीय रही है। उसके दर्शन, पूजन, सेवा-शुश्रुषा आदिमें आस्तिक जन पुण्य मानते हैं। ही सर्वोच्च स्थान दिया गया है। यज्ञ करनेसे पृथिवी, जल, व्रत, जप, उपवास सभीमें गौ और गोप्रदत्त पदार्थ वायु, तेज, आकाश—इन पंचभूतोंकी शुद्धि होती है। परमावश्यक है। गायका दूध अमृततुल्य होता है, जो पंचभूतोंके सामंजस्यसे मानव-शरीर बना है। अतः शरीरको सुरक्षित रखनेके लिये पंचभूतोंका शुद्ध रूपोंमें शरीर और मस्तिष्कको पुष्ट करता है। गोमूत्र गंगाजलके समान पवित्र माना जाता है और गोबरमें साक्षात् उपयोग आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है। यज्ञ करनेसे जो लक्ष्मीका निवास है। शास्त्रोंके अनुसार हमारे अंग-परमाणु निकलते हैं, वे बादलोंको अपनी ओर खींचते हैं, प्रत्यंग, मांस-मज्जा-चर्म और अस्थिमें स्थित पापोंका जिससे वर्षा होती है। यज्ञमें गायके सूखे गोबरका प्रयोग विनाश पंचगव्य (गोदुग्ध, गोदिध, गोघृत, गोमूत्र एवं किया जाता है। इस सूखे गोबरसे एक प्रकारका तेज गोमय)-के पानसे होता है। आयुर्वेद और आधुनिक निकलता है, जिससे लाखों विषैले कीट तत्क्षण ही नष्ट हो जाते हैं। गौके सूखे गोबरको जलानेसे मक्खी-मच्छर विज्ञानके अनुसार भी शरीर-स्वास्थ्य एवं रोग-निवृत्तिके लिये गायके दूध, दही, मट्ठा, मक्खन, घृत, मूत्र, आदि मर जाते हैं। गौके दूध, दही और घी आदिमें वे गोबर आदिका अत्यन्त उपयोग है। सब पौष्टिक पदार्थ वर्तमान हैं, जो अन्य किसी दुग्धादिमें गायके शरीरमें सभी देवताओंका निवास है। नहीं पाये जाते। गोमूत्रमें कितने ही छोटे तथा बड़े रोगोंको अतः गौ सर्वदेवमयी है। पुरातन कालसे ही भारतीय दूर करनेकी शक्ति है, इसके यथाविधि सेवन करनेसे सभी संस्कृतिमें गाय श्रद्धाका पात्र रही है। भगवान् श्रीरामने प्रकारके उदर-रोग, नेत्ररोग, कर्णरोग आदिको मिटाया जा यौवनमें प्रवेश करते समय अपने जीवनका लक्ष्य सकता है। कई संक्रामक रोग तो गौओंके स्पर्श की हुई

िभाग ९६ वायु लगनेसे ही निवृत्त हो जाते हैं। गौके सम्पर्कमें रहनेसे नहीं किया जा सकता। चेचक-जैसे रोग नहीं होते। धर्म और संस्कृतिकी प्रतीक आज गौको व्यावहारिक उपयोगिताकी दृष्टिसे

ही है। गौ धर्म और अर्थकी प्रबल पोषक है। धर्मसे लिया था। गौकी धार्मिक महानता उसमें जिन सूक्ष्मातिसूक्ष्म-मोक्षकी प्राप्ति होती है तथा अर्थसे कामनाओंकी सिद्धि रूप तत्त्वोंकी प्रखरताके कारण है, उनकी खोज तथा होती है। इस प्रकार गौसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी जानकारीके लिये आधुनिक वैज्ञानिकोंके भौतिक यन्त्र

प्राप्ति होती है। इसीलिये प्राचीन कालसे ही गौका सदैव स्थूल ही रहेंगे। यही कारण है कि इक्कीसवीं भारतीय जीवनमें इतना ऊँचा महत्त्व है। हमारे देशमें गोपालन पश्चिमी देशोंकी भाँति केवल दूधके लिये नहीं

होता है, प्रत्युत अमृततुल्य दूधके अतिरिक्त खेत जोतनेके लिये एवं भार ढोनेके लिये बैल तथा भूमिकी उर्वरता बनाये रखनेके लिये उत्तम खाद भी हमें गायसे प्राप्त होती है, जिसके अभावमें हमारे राष्ट्रकी अर्थव्यवस्थाका संकट

होनेके साथ-साथ गाय भारतकी कृषि-प्रधान अर्थ-

व्यवस्थाकी भी रीढ़ है। कौटिल्य-अर्थशास्त्रमें गोपालन

और गोरक्षणको बहुत महत्त्व दिया गया है। जिस भूमिमें

खेती न होती हो, उसे गोचर बनानेका सुझाव अर्थशास्त्रका

किसी प्रकार दूर नहीं किया जा सकता। हमारे देशमें लाखों एकड़ भूमि ऐसी है, जहाँ ट्रैक्टरोंका उपयोग ही

🔹 गोभी और पत्तागोभीकी पत्तियाँ खिलाना।

🕯 गुड़ और काँजी मिलाकर खिलाना।

🕯 पलास और सेमलके फूल खिलाना।

🕏 तीसीकी खल और उबाला हुआ मटर खिलाना। 🛊 किसारीकी दालके साथ गेहूँ उबालकर खिलाना।

🔹 गुँवार खूब पकाकर या रातभर जलमें भिंगोकर खिलाना।

🕸 बीजवाले केलेको चावलके साथ उबालकर खिलाना।

गायका दूध बढ़ानेके उपाय

🕸 प्रतिदिन हरी-ताजी घास पेटभर खिलाना।

🕏 दूध दुहकर उसीको पिला देना।

🕏 गुड़ एक भाग और जौ तीन भाग एक साथ पकाकर प्रतिदिन खिलाना।

🕯 पपीतेके कच्चे फल और पपीतेकी पत्तियाँ पीसकर गुड़ मिलाकर खिलाना।

🕏 घी, मैदा और गुड़ मिलाकर पकाकर खिलाना। इससे खूब दूध बढ़ता है।

🕏 सनके फूल, महुआके फूल, घास और गुड़ जलमें उबालकर खिलाना।

मूलाधार कहा गया है।[गोसेवा-अंक]

इन सब विशेषताओंके कारण गौको भारतीय संस्कृतिका

भौतिक तुलापर तौला जा रहा है। हमें याद रखना चाहिये

कि आजका भौतिक विज्ञान गौकी इस सूक्ष्मातिसूक्ष्म

परमोत्कृष्ट उपयोगिताका पता ही नहीं लगा सकता, जिसे

भारतीय शास्त्रकारोंने अपनी दिव्य दृष्टिसे प्रत्यक्ष कर

असफल रहा है। गौका धार्मिक महत्त्व भाव-जगत्से सम्बन्ध रखता है और वह शास्त्र-प्रमाणद्वारा शुद्ध

भारतीय संस्कृतिके दृष्टिकोणसे ही जाना जा सकता है।

गोपूजन, गोसेवा आदिका वास्तविक तथ्य समझनेमें

सदीकी ओर अग्रसर विज्ञानवेत्ता भी गोमाताके लोम-लोममें देवताओंके निवास-रहस्य और प्रात: गोदर्शन.

संख्या ८] धनोपार्जनका उचित और अनुचित रूप धनोपार्जनका उचित और अनुचित रूप

सच्चा सेवक बननेका उपाय

आप अगर सच्चे सेवक होना चाहते हैं और सबसे बड़े सेवक होना चाहते हैं तो आपको ये तीनों

महानुभाव! मैं नहीं कहता कि आप किसीका भला करें, मैं नहीं कहता कि आप किसीके साथ भलाई

करें। यह क्या कम है कि हम किसीको बुरा न समझें। हम किसीका बुरा न चाहें। हम किसीके साथ बुराई

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

दु:खसे मिलता है, वह ठीक नहीं है, क्योंकि जिसका

जन्म किसीके दु:खसे होता है, उसका फल भी दु:ख

ही होगा। आमके बीजका फल भी आम ही होगा और

व्यापार है, जिसमें जूएकी भाँति किसी एकका नुकसान ही

दूसरेका लाभ होता है। इस बातको सभी जानते हैं कि सट्टेमें धन बाहरसे नहीं आता। सट्टा करनेवालोंमें ही

एकका नुकसान और दूसरेका लाभ होता है। सट्टा करनेवाले

सभी लाभकी आशासे करते हैं, परंतु सबको लाभ नहीं हो

सकता। इस व्यापारमें किसीका दु:ख ही दूसरेका सुख है,

अत: यह व्यापार उचित नहीं है। दूसरा व्यापार वह है,

जिसमें समाजकी आवश्यकता पूरी करनेके लिये वस्तुओंका उत्पादन किया जाता है, जहाँ वस्तुएँ अधिक होती हैं,

वहाँसे उस जगह पहुँचायी जाती हैं, जहाँ उसकी आवश्यकता

होती है। इस प्रकार जो व्यापार समाजकी आवश्यकता

पूरी करनेके लिये किया जाता है, उसमें किसीका नुकसान

नहीं होता। श्रम करनेवालेसे लेकर भोक्तातक सभीको

सुख मिलता है और व्यापारीको भी उसके परिश्रमके

बदलेमें धन मिल जाता है। यह व्यापार ठीक है।

व्यापारके दो रूप होते हैं-एक तो वह सट्टेका

बबुलके बीजका फल काँटा होगा।

मनुष्य धन क्यों चाहता है ? जिन वस्तुओंकी उसे प्रकारकी इच्छाओंके जालमें फँसा रहता है। वास्तवमें

जरूरत है, वे धनसे मिलती हैं। वस्तुओंकी उसे जरूरत

क्यों है ? भोग-इच्छाकी पूर्तिके लिये। इच्छाकी पूर्ति क्यों

एवं काम ही लोभ है। अत: यह सिद्ध हुआ कि लोभके

कारण ही मनुष्यको धनकी जरूरत होती है। लोभ न रहे

स्वाभाविक है, जो वस्तु या परिस्थिति उसे प्राप्त है, उससे

वह अच्छी चाहता है। जैसा मकान प्राप्त है, उससे अच्छा

चाहता है। वैसा मिल जाय तो उससे अच्छा चाहता है।

जितना धन प्राप्त है, उससे ज्यादा धन चाहता है, जो वस्तु प्राप्त है, उससे अच्छी और नाना प्रकारकी वस्तुएँ

चाहता है, जितना सम्मान प्राप्त है, उससे अधिक चाहता

है। जितनी भोगसामग्री प्राप्त है, उससे अधिक चाहता

है। इस प्रकार कभी भी उसकी चाहका अन्त नहीं होता।

आगे-से-आगे अभाव बना रहता है और अभावके रहते

वस्तु और धन चला जाता है, तब चाहता है कि किसी

तरह खर्च चलता रहे, अधिक नहीं, तो पहलेवाली

परिस्थिति ही प्राप्त हो जाय, तो मैं सुखी हो जाऊँगा।

फिर यदि वह परिस्थिति प्राप्त हो जाती है, तो उससे

अधिक चाहने लग जाता है। इस प्रकार मनुष्य नाना

बातें अपने ही द्वारा अपनेमें स्वीकार करनी पडेंगी-१-आजसे मैं किसीको बुरा नहीं समझूँगा। २-आजसे मैं किसीका बुरा नहीं चाहूँगा।

न करें। यह कोई कम नहीं है। [सत्संग : सन्तोंके संग]

३-आजसे मैं किसीके साथ बुराई नहीं करूँगा।

जब किसी कारणसे नुकसान हो जाता है, प्राप्त

मनुष्यकी आगे बढनेकी, ऊपर उठनेकी रुचि

तो धनकी जरूरत नहीं रहती।

कभी सुख नहीं मिल सकता।

चाहकी पूर्ति सुख और नयी चाहका होना ही दु:ख है

एवं चाहकी निवृत्ति ही सुख-दु:खसे परेकी स्थिति है

चाहता है? उसकी पूर्तिमें सुख प्रतीत होता है।

वस्तुओंके संयोगमें सुख मालूम होता है, यही काम है और यही चित्तकी शुद्धि है। मनुष्यको जो सुख किसीके

वस्तुओंकी प्राप्ति उसके सुख-दु:खका कारण नहीं है।

कृपानुभूति

माननीय राज्यपालजीपर संतकृपा

परम श्रद्धेय गुरुदेव सन्तश्री देवराहा बाबा वर्तमानयुगीन भगत! आजके बाद तुमको दवाकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी। भारतवर्षके सर्वाधिक सुख्यात परमसिद्ध सन्तोंमेंसे एक थे।

उनके भक्तों, शिष्यों एवं प्रशंसकोंके अनुसार बाबाजी कई सौ वर्षोंतक इस धराधामपर विराजमान रहे। मेरा यह परम

सौभाग्य रहा कि मुझे उनकी कृपा प्राप्त थी। उन्होंने मेरे जीवनको आध्यात्मिक तो बनाया ही साथ ही उनकी कृपासे

अनेक भौतिक कठिनाइयों और विपत्तियोंसे भी मुक्ति मिली।

उनकी कृपासे मैंने अनेक लोगोंको चमत्कारिक ढंगसे कठिनाइयों एवं रोगोंसे मुक्त होते देखा। इसी प्रकारकी एक घटना यहाँ प्रस्तुत है, जो उत्तर प्रदेशके राज्यपाल रहे माननीय श्री जी०डी०

तपासेजीसे सम्बन्धित है। घटना सन् १९७९ ई० की है। मैं पुलिस उप-अधीक्षक पदपर, कसिया (जनपद देवरिया)-में नियुक्त था। माननीय गणपितराव देवजी तपासे उत्तर प्रदेशके राज्यपाल थे। पुलिस अधीक्षक प्रभारी जनपदकी अनुपस्थितिमें

देवरिया जनपदका प्रभार मुझे ही सँभालना पडता था। ऐसी ही स्थितिमें एक दिन रातमें दूरभाषपर मुझको सूचना मिली कि माननीय राज्यपालजी कल प्रात: १० बजे राजकीय वाहन

एवं पुलिस इस्कोर्टके साथ देवराहा बाबाके दर्शनार्थ पहुँच रहे हैं। मैं समुचित व्यवस्था करूँ तथा उनके आश्रमतक भी

सूचना भिजवा दूँ। माननीय राज्यपालजीको निकटसे देखने तथा पायलट बनकर बाबाके आश्रमतक ले जानेका मेरे लिये पहला अवसर

था। अन्य सुरक्षाकर्मियोंको आश्रमकी परिधिसे बाहर रोक मैं उन्हें साथ ले नंगे पैर बाबाके मंचके निकट पहुँचाकर वापस

निकलनेवाला ही था कि बाबाजीने मुझको भी रोक लिया। अब मैंने मझोले कदके स्थूलकाय राज्यपाल महोदयको ध्यानसे देखा। देखनेमें उनकी आयु ७०-७५ वर्षसे अधिक नहीं लग

रही थी, किंतु मैंने ध्यानसे देखा तो उनको एक स्थानपर स्थिर खड़ा रहनेमें कठिनाई हो रही थी। श्रीतपासेने गुरुदेवसे

अपनी समस्या बताते हुए कहा कि 'बाबा! पता नहीं क्यों, कुछ दिनोंसे एक स्थानपर देरतक खड़ा होनेपर मुझको अपने

शरीरको स्थिर रखनेमें असुविधा हो रही है। मैं दवा भी ले

यह लो इस गठरीको सिरपर रखकर एक स्थानपर खडे हो जाओ। यदि कोई परेशानी हो तो दोनों पैरोंकी अँगुलियोंको खडे-खडे हिलाते रहो।' कहकर बाबाने मंचसे प्रसादके

उनसे टोकरीको लपक लेनेको कहा। मुझको स्वयं आश्चर्य हुआ कि महामहिमने लगभग उछलते हुए दोनों हाथोंसे उस टोकरीको पकड लिया। हँसते हुए बाबाने कहा—'देखा!

रूपमें फलोंकी एक टोकरी तपासेजीकी ओर उछाल दी और

कैसे तुमने प्रसादकी टोकरीको नीचे नहीं गिरने दिया और लपक लिया। अब तुम कम-से-कम आधा घण्टा सिरपर टोकरी रखे एक स्थानपर खडे रहकर मुझसे बात करते रहो।

हाँ, प्रतिदिन कम-से-कम प्रात:कालीन एवं सायंकालीन संध्याको श्रीहरिविष्णु, भगवान् राम तथा भगवान् वासुदेव कृष्णका नाम जप करते रहो। मेरा बताया भगवान् कृष्णका

पावन मन्त्र तुम्हें स्मरण हो तो मुझे सुनाओ।' मुझे पुन: सुखद आश्चर्य हुआ, जब तपासेजीने श्रद्धापूर्ण स्वरमें 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय। कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने। प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नमः ॥' पाठ सुना दिया।

बाबा ठठाकर हँस पड़े और बोल उठे—'अभी तो कुछ महीनों बाद तुझको दूसरे किसी राज्यकी गवर्नरी करनी है भगत!''कहाँकी बाबा?'तपासेजीने उत्सुकतासे पूछा। बाबाने

हँसते हुए कहा था—'जितना बताया वही बहुत है। हाँ! उस जगहकी राजनीतिक उठा-पटकमें विवादसे बचना तुम्हारे लिये कठिन हो जायगा। बस मन्त्रजप करते रहना, कल्याण होगा।'

रव्माकँ dੰਗੰਭ ਜੀਏ ਨਿਲਾਮ ਤੁੰਦੇ ਵੇਖੇ ਵੇਵੇਂ ਮਵੇਂ ਸ਼੍ਰੇ ਤੇ ਭਾਰੇ ਤਾਰੇ ਤੁੰਦੀ na ਜ਼ਿਸ਼ਤ + ਕੁੱਸ ਮਾਰੇ ਦਾ ਕੁਸਾ ਮਾਦੇ OVE BY Avinash/Sha

लगभग एक घण्टे बाबाके पास रहनेके बाद प्रसन्न मनसे तपासेजी वापस लौटे थे। लौटते समय तपासेजी मुझको धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सके। कुछ महीने बाद वह उत्तर

कहनेकी आवश्यकता नहीं कि उनका जो रोग बड़े-बड़े डॉक्टरोंकी टीम ठीक न कर सकी, वह रोग बाबाके आश्रममें एक घंटे खड़े रहनेमात्रसे ठीक हो गया। ऐसी थी बाबाकी

प्रदेशसे स्थानान्तरित होकर हरियाणाके राज्यपाल हुए थे।

पढो, समझो और करो संख्या ८] पढ़ो, समझो और करो थीं। उसने रोटियोंकी ओर संकेत करते हुए कहा-आतिथ्यकी महान् भारतीय परम्परा 'रोटियाँ तो बन रही हैं।' मालिक उन्हें भीतर ले गया एक भारतीय प्राध्यापक अनेक वर्षींतक इंग्लैण्डके और आदरपूर्वक स्वयं दो थालीमें भोजन परोसकर लाया। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालयमें शिक्षा एवं शोधके पश्चात् उन्हें उस दिन भोजनसे बड़ी तृप्ति हुई। वे विस्मयमें थे जब भारत लौटा तो विश्वविद्यालयमें प्राध्यापक नियुक्त कि जो मालिक स्वयं गद्दीपर बैठे हुए नौकरोंसे काम हुआ। वह प्राय: प्रतिदिन नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्तामें कराता था, वह आज स्वयं अपने हाथसे इतनी सेवा क्यों कर रहा है! भोजनके उपरान्त जब ऑक्सफोर्डवाले एक अन्य युवा प्राध्यापकको शोधमें मार्गदर्शनहेतु ले जाता था। संध्या समय लौटती बारमें वे दोनों फिदरपुर प्रोफेसरने पूछा कि बिल कितना हुआ तो मालिकने हाथ मार्केटमें एक साधारण होटलमें चाय, जलपान करते। जोडकर कहा, 'हमें लज्जित मत करो। हमारा होटल बन्द हो चुका है। यह भोजन आपको अतिथिके रूपमें ऑक्सफोर्डका पढ़ा हुआ प्राध्यापक प्रतिदिन भारतके सामान्य चाय होटलकी इंग्लैण्डके बड़े वैभवशाली होटलोंसे कराया है। पैसेका नाम लेकर हमारे अतिथि-धर्मको तुलनाकर भारतकी निन्दा करता रहता था। वहाँके होटल कलंकित मत कीजिये।' प्रोफेसरने बहुत कहा कि 'दुकान महल-जैसे थे और भारतमें खपरासे ढके हुए साधारण यही है। यहींपर हम दोनों जलपान लेते हैं।' पर मालिकने झोंपड़ेंमें होटल चलता। वहाँ कालीन बिछे रहते, यहाँ कहा कि दुकानकी अपनी मर्यादा है। दुकान बन्द हो कीचड़ और धूलसे भरा हुआ मिट्टीका फर्श, वहाँ चुकी है। यह भोजन दुकानके लिये नहीं, हमारे निजी सुन्दर सूट-बूट पहने बेरे साफ-सुथरी मेजोंपर भोजन प्रयोगके लिये बन रहा था। इसका पैसा लेनेपर हमारा पहुँचाते, यहाँ अधनंगे-अनपढ़ बच्चे गन्दी-सी टेबलोंपर धर्म नष्ट हो जायगा। इस दृश्यसे उस प्रोफेसरकी आँखें मैले हाथोंसे मैले बरतनोंमें खाना पहुँचाते थे। वहाँ श्रद्धासे गीली हो गयीं। और उसने कहा This is सुगन्धित वातावरण, यहाँ मक्खी-मच्छरकी भरमार, वहाँ wonderful India. इंग्लैण्डमें होटलमें भोजन करनेपर बैण्ड-बाजा और नर्तिकयाँ, यहाँ अजीब शोरगुल और सगे भाईसे भी चार्ज किया जाता है, किंतु भारतमें नौकरोंकी चिल्लाहट, वहाँका मैनेजर या मालिक रईसके नितान्त अपरिचित व्यक्तिको निष्काम भावसे भोजन कराना समान, यहाँका होटल-मालिक पसीनेसे लथपथ एक अतिथि-धर्म माना जाता है। उस दिन उसे समझ आया गंजी एवं धोती पहने हुए ग्राहकोंसे पैसा लेनेमें और कि भारतकी निर्धनताके फटे चिथड़ोंके नीचे भी भारतकी नौकरोंको डाँटनेमें लगा हुआ। इंग्लैण्डकी चकाचौंधके दिव्य आत्मा छिपी हुई है।—डॉ० हरवंशलाल ओबराय बाद विदेशसे आये हुए उस भारतीयको भारतमें कुछ भी (२) पैसा एक साधन है, समाधान नहीं अच्छा दिखायी नहीं देता। वह रोज कहता-This dirty India. I hate India. एक दिन नेशनल लाइब्रेरीमें मुझे कई सेवा-संस्थाओंमें काम करनेका अवसर बहुत विलम्बतक पुस्तकोंका अध्ययनकर जब दोनों मिला, जैसे—अस्पताल, संस्कृत महाविद्यालय, कॉलेज, गौशाला, व्यायामशाला आदि। मुझे संस्थाएँ जो मिलीं, वे प्राध्यापक लौटे तो देखा कि बाजार बन्द हो गया है। बीमार हालातमें और आर्थिक दृष्टिसे बुरी तरह कमजोर कोई खानेकी दुकान भी खुली नहीं मिली। अन्तमें उसी होटलके पास पहुँचे जहाँ प्रतिदिनका चाय-पान करते थीं। एक संस्था तो भारतके बहुत बड़े औद्योगिक घरानेसे सम्बन्धित थी, जिनके पास पैसेकी कोई कमी नहीं थी, थे। होटलका द्वार ढका हुआ था। मालिकने कहा— 'होटल बन्द हो चुका है।' ऑक्सफोर्डवाले प्रोफेसरने लेकिन वह भी बीमार चल रही थी। कारण सही कार्यकर्ताका झाँककर देखा तो भीतर अन्दरके चूल्हेमें रोटियाँ बन रही अभाव था। आजकल समाजमें भी जो पैसा दान दे उसकी

भाग ९६ ***************** कमण्डलुके अलावा कुछ नहीं। अभी भिक्षा मिल गयी तो ज्यादा पूछ होती है, वनिस्पत कार्यकर्ताके, परंतु मेरा यह शामकी भिक्षाका ठिकाना नहीं, फिर भी चिन्ता नहीं, कारण अनुभव कहता है कि पैसेके अभावमें कभी कोई संस्था मरती नहीं। जब मरती है तो सही कार्यकर्ताके अभावमें। वह अपने स्वभावमें सन्तुष्ट है, वहीं एक भिखारीके पास फिर पैसेसे साधन खरीदे जा सकते हैं जैसे सोनेके लिये पैसा होते हुए भी वह गरीब है, कारण वह हमेशा अभावमें बेडका गद्दा, लेकिन आवश्यक नहीं कि नींद आ ही जाय। रहता है। इसका निष्कर्ष यह निकला कि पैसा आपको न सुख देगा, न शान्ति देगा और न सन्तुष्टि देगा, केवल कारण पैसेसे बेड खरीद सकते हैं लेकिन पैसेसे अच्छी नींद आयेगी, ऐसा संभव नहीं। उसी प्रकार आप पैसेसे कई साधन देगा। स्वामी रामतीर्थ हमारे देशके बहुत ही उच्चकोटिके व्यंजन तो खरीद सकते हैं, लेकिन भूख पैसेसे नहीं आयेगी। नींदके लिये सन्तुष्टि तथा निश्चिंतता चाहिये, अगर चिन्ता महात्मा हो गये। उनको वेदान्तका मूर्तिमान् रूप माना रहेगी तो स्वाभाविक है गहरी नींद नहीं आयेगी, भले ही जाता था। एक बार अमेरिका पानीके जहाजसे जा रहे थे। आप बिस्तरपर पड़े-पड़े रात बिता दें। ठीक उसी प्रकार कोई सज्जन उनसे मिलने आये तो पूछा कि 'अमेरिकामें बुखारसे जैसे अच्छे-से-अच्छा भोजन भी खानेका मन आपका कोई मित्र या परिचित है ' तो स्वामीजीने कहा कि 'है तो' उन्होंने पूछा—'वह कौन है'तो स्वामीजी बोले— नहीं करेगा। कारण भूख मर जाती है, लेकिन स्वास्थ्य ठीक 'तुम हो।' वह स्वामीजीसे प्रभावित हो गया और पूछा— हो, सुख-शान्ति हो तो सादा भोजन भी रुचिकर लगेगा। 'आपका सामान कहाँ है ?''मेरा सामान यही है जो मेरे आपको अनुभव चाहिये तो किसी वृद्धको पकड़ना तनपर है।''आप कहाँ खाते-पीते हैं' तो स्वामीजीने कहा पडेगा, जिसने जिन्दगी जिया है, आप चाहें कि बोरा भरके कि 'प्यास लगती है तो कोई हमें पानी पिला देता है, भूख पैसा बाजार ले जाऊँ और अनुभव खरीदकर ले आऊँ तो लगती है तो कोई रोटी दे देता है तथा सोनेके लिये पेडके अनुभव मिलेगा नहीं। एक सज्जनने कहा कि मेरे पास रुपया है, लेकिन मैं नीचेकी जमीन काफी है।' अब आप देखें ऐसे स्वामीजीके लिये पैसा भी साधन नहीं रह गया। ऐसे बहुतसे महात्मा सबसे गरीब आदमीको दुँगा। एक-से-एक गरीब भीख माँगने आये, लेकिन वे उसको सबसे गरीब नहीं मानते, हुए, जो पैसेको स्पर्श ही नहीं करते थे। स्वामी रामकृष्णदेव परमहंस तो पैसोंको स्पर्श भी नहीं करते थे। तो ऐसेमें फिर किसी राजाकी सवारी सामनेसे जा रही थी, तो उसने पैसोंका थैला उसके पास फेंक दिया। तो राजाने पूछा कि उनके लिये पैसा साधन भी नहीं रह गया। राजा-महाराजा एवं सम्पन्न लोग ऐसे ही महात्माओंके पास आशीर्वाद तुम तो सबसे गरीब व्यक्तिको पैसे देनेवाले हो, तो उस लेने जाते हैं। ऐसे महात्माओं के लिये पैसा भी साधन होनेका सज्जनने कहा कि मेरी दृष्टिमें सबसे ज्यादा गरीब आप ही मुझे लगे। राजाने पूछा कि मेरे पास इतनी सम्पत्ति है, इतना महत्त्व खो देता है। ऐसे उदाहरण कई महात्माओंके मिलेंगे। किसी संस्थामें नि:स्वार्थ भावसे सेवा देनेवालेको पैसा देनेवाले बड़ा राज्य है, मैं सबसे बड़ा गरीब कैसे ? तो उस सज्जनने अपने-आप मिल जाते हैं, माँगना भी नहीं पड़ता। ऐसा ही कहा कि आपके पास सम्पत्ति और राज्य होते हुए भी आपकी भूख दूसरेकी सम्पत्ति एवं राज्यको हड़पनेकी मिटी मेरा अनुभव है। अत: पैसा साधन होते हुए भी विरक्त नहीं, अत: मेरी दृष्टिमें सबसे बड़े गरीब आप ही हैं, संन्यासीके पास साधन होनेका भी महत्त्व खो देता है। कारण आप हमेशा अभावमें रहते हैं। यहाँ भी देखें कि —दीनानाथ झुनझुनवाला सम्पत्ति एवं राज्य होते हुए भी वह गरीब है। (3) एक संन्यासीके पास लँगोट एवं कमण्डलुके अलावा भगवान् तो भक्तका प्रेम देखते हैं जीवनजी डूडी राजस्थानके नागौरके कलवा गाँवमें कुछ भी नहीं, फिर भी वह गरीब नहीं। वहीं एक भिखारीके रहनेवाले एक कट्टर कृष्णभक्त थे। २० जनवरी सन् १६१५ई० पास इतना पैसा था कि वह अपने कमाये पैसोंके बिस्तरपर में, उन्हें एक कन्यारत्नकी प्राप्ति हुई, जिसका नाम उन्होंने सोता था। अब आप देखें संन्यासीके पास लँगोट एवं

संख्या ८] पढ़ो, समझ	ो और करो		
करमाबाई रखा। एक बार जीवनजीको बाहर जाना पड़ा	करमाबाईने कहा—'मैं रसोई और बर्तन साफ कर		
और इसलिये, उन्होंने करमाबाईको निर्देश दिया कि वे	रही हूँ, बस कुछ और मिनट रुकिये।'		
श्रीकृष्ण के लिये सुबह भोजन (भोग या प्रसाद या नैवेद्य)	'वे मुझे मंदिरमें बुला रहे हैं, माँ! वहाँ जल्दी जाना		
तैयार करें और चढ़ायें। प्रसादके भोग लेनेके बाद ही उन्हें	है। कृपया मुझे खिचड़ी दें'—जगन्नाथने भीख माँगी।		
भोजन करना चाहिये, उन्होंने चेतावनी दी।	ब्रह्माण्डके भगवान् जिनके लिये ५६ प्रकारके व्यंजन भोगके		
अगली सुबह, करमाबाई जल्दी उठ गयी। अपने	रूपमें इंतजार कर रहे थे, एक माँकी प्रेममयी भक्तिकी		
पिताके निर्देशोंका पालन करनेके इरादेसे, उसने तुरंत खिचड़ी	खिचड़ीके लिये तरस रहे थे।		
तैयार की और कृष्णको अर्पित की। हालाँकि, भोग अछूता	करमाबाई भोग लेकर रसोईके बाहर निकली। उन्होंने		
रहा। इस बातसे परेशान होकर करमाबाई खुद भी भूखी	झटपट उसे खा लिया, और वापस मन्दिरमें चले गये। जब		
रह गयी। जब प्रभुने नहीं खाया तो वह कैसे खा सकती	पुजारीने मंदिर खोला, तो उसने देखा कि कुछ खिचड़ी		
थी ? कुछ समय बाद उसकी भक्तिसे प्रसन्न होकर कृष्ण	उनके मुँहमें चिपकी हुई है , तो उन्होंने पूछा—'यह कैसे		
करमाबाईके सामने प्रकट हुए और भोग ग्रहण किया।	हुआ, भगवन् ?'		
यह अब एक दिनचर्या बन गयी, हर सुबह करमाबाई	कृष्णने पूरी कहानी सुनायी कि कैसे करमाबाईके		
उठती और जल्दीसे खिचड़ी तैयार करती, जिसे कृष्ण	घरमें हमेशा खिचड़ी होती थी, और आज कैसे उन्हें देरी		
पसन्द करते थे। जब जीवनजी लौटे तो करमाबाईने उन्हें	हुई; क्योंकि करमाबाईने संतके निर्देशोंका पालन किया था।		
सारी घटनाएँ बतायीं। वह चौंक गये और उसपर विश्वास	तब भगवान् जगन्नाथके निर्देशके साथ मंदिरके		
करनेसे इनकार कर दिया। करमाबाईके कहनेपर कृष्ण	पुजारी करमाबाईके पास पहुँचे और उनसे भगवान्की		
उन दोनोंके सामने प्रकट हो गये और खिचड़ी खायी।	इच्छा बतायी। सन्तको यह सुनकर बड़ा सदमा लगा कि		
कुछ वर्षोंके बाद करमाबाई ओडिशाके पुरीमें रहने	उनके कारण भगवत्कार्यमें बाधा पड़ी और भगवान्को		
चली गयीं। वहाँ भी, भगवान् जगन्नाथ हर सुबह अपनी	भूखा रहना पड़ा। उन्होंने करमाबाईको अपनी सामान्य		
पसन्दीदा खिचड़ी खानेके लिये उनके दरवाजेपर आते।	दिनचर्याके अनुसार भोग तैयार करनेको कहा। भगवान्		
एक बार एक संत करमाबाईके घर आये और रातके	चाहते थे कि भक्तका भोग प्रेमसे तैयार हो, कर्मकाण्डोंकी		
लिये डेरा डाला। अगली सुबह उन्होंने करमाबाईकी	पवित्रताके विनियमोंसे रहित।		
दिनचर्यापर ध्यान दिया, तो वे घबरा गये। बिना नहाये,	कुछ वर्षोंके बाद एक दिन पुजारीने भगवान्की आँखोंसे		
पूजा-पाठ किये, बर्तन साफ किये और रसोई साफ किये	आँसू बहते हुए देखा। यह पूछे जानेपर कि वे क्यों रो रहे		
बिना वह भोग कैसे बना सकती थी। उन्होंने उसे भोग	हैं, भगवान्ने उत्तर दिया—'मेरी माँ करमाबाईका आज		
तैयार करने और चढ़ानेसे पहले पालन किये जानेवाले	निधन हो गया। नि:संदेह वह मेरे पास आयी है, लेकिन		
नियमोंके बारेमें बताया।	मुझे उसकी खिचड़ीकी याद आ रही है। अबसे कौन मुझे		
अगली सुबह, जब कृष्णने पुकारा—'माँ! मैं यहाँ	खिचड़ी देगा।' यह कहकर भगवान् जगन्नाथ और जोरसे		
हूँ। मेरे लिये मेरी खिचड़ी लाओ।'	रुदन करने लगे।		
'कृपया प्रतीक्षा करें, मैं स्नान कर रही हूँ।'—उत्तर	और इसलिये यह तय हुआ कि उस दिनसे करमाबाईकी		
आया	खिचड़ी ५६ विभिन्न व्यंजनोंके भोगसे पहले श्रीजगन्नाथ		
थोड़ी देर बाद वह फिर पुकारा—'माँ! खिचड़ी	स्वामीको दिया जानेवाला पहला भोग होगा। भगवान् तो		
कहाँ है ?'	भक्तका प्रेम देखते हैं।		
─→	>+		

मनन करने योग्य किसीका अपमान न करें विवाहार्थ इधरसे जाते हुए मेरे पाँवमें यह कुशांकुर चुभ कुसुमपुरमें नन्द नामका एक राजा था। उसके

मन्त्रीका नाम था शकटार। किसी कारणवश मन्त्री और गया। इस घावके फलस्वरूप मेरा विवाह बाधित हुआ।

राजामें विरोध हो गया। फलस्वरूप राजाने मन्त्री

शकटारकी सभी सम्पत्तियोंको जब्त करके समस्त

परिवारजनोंके साथ उसे कारागारमें बन्द करवा दिया। राजाकी ओरसे शकटारसहित समस्त परिवारको आहारके

रूपमें आधा पाव सत्तू मिलता था, जो कि एक व्यक्तिकी

क्षुधाको शान्त करनेयोग्य भी नहीं था। परिवारके सभी सदस्योंने विचार किया कि राजासे बदला लेनेके लिये

शकटारकी प्राण-रक्षा आवश्यक है, अत: इस आहार (सत्तू)-को लेकर शकटार जीवित रहें एवं राजा नन्दका

प्रतीकार करें। कालान्तरमें शकटारके परिवारके सभी सदस्य अन्न-जलके अभावमें कालकवलित हो गये,

किंतु शकटार बदला लेनेकी प्रतीक्षामें जीवित बना रहा। मन्त्री तो वह राजाका था ही। अतः कभी-कभी राजाकी अनेक समस्याओंको वह अपने बुद्धिचातुर्यसे परोक्षरूपमें

सुलझा दिया करता था। राजाको जब यह ज्ञात हुआ कि शकटार अभी जीवित है एवं उसने ही इन समस्याओंका समाधान किया है, तो प्रसन्न होकर राजा नन्दने शकटारको बन्धनमुक्तकर अपने प्रधान अमात्य

राक्षसके सहायकके रूपमें नियुक्त कर दिया। शकटार दुर्लभ पद पाकर प्रसन्न हुआ, उसने

सोचा—मेरे परिवारके सभी सदस्योंने राजा नन्दसे बदला लेनेके निमित्त अपना-अपना आहार त्यागकर मेरे प्राण

बचाये। अब अवसर पाकर बदला नहीं लेनेसे समाजमें अपयश तो होगा ही, साथ ही मैं कायर भी कहलाऊँगा।

इस प्रकार विचार करता हुआ शकटार नगरके बाहर भ्रमण करने चला गया। उसने भ्रमण करते हुए

देखा कि एक ब्राह्मण-बालक कुशाको उखाड़कर उसकी जडमें तक्र डाल रहा है। यह देखकर मन्त्री

शकटारने पूछा—'ब्राह्मण! तुम कौन हो और यहाँ क्या

कर रहे हो?' उसने उत्तर दिया—'मैं चाणक्यशर्मा

दूँगा, तबतक अपनी इस मुक्त शिखाको नहीं बाँधूँगा।' चाणक्यकी इस प्रतिज्ञाको सुनकर मन्त्री शकटार कृतकृत्य हो गया और राजा नन्दसे अपने परिवारके

मैंने क्रोधित होकर प्रतिज्ञा की है कि इस स्थलके कुशोंको ही निर्मूल कर दुँगा। मैंने आयुर्वेदशास्त्रमें ऐसा पढ़ा है कि कुशकी जड़में तक्र डालनेसे कुशका नाश

हो जाता है, इसपर शकटारने पूछा—'यदि तुम वृक्षायुर्वेद नहीं जानते तो इसके विनाशका क्या उपाय करते?' चाणक्यने उत्तर दिया कि 'अभिचार-कर्मके द्वारा

कुशके विनाशकी कामनासे हवन करता।' शकटार उस ब्राह्मण बालकके प्रतिशोधकी भावना एवं उपायोंको जानकर चिकत हो गया। वह सोचने

लगा कि यदि यह ब्राह्मण किसी उपायसे मेरे शत्रु अर्थात् राजा नन्दका भी शत्रु हो जाय तो मुझे वैरभावका बदला लेनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी।

निमन्त्रित करवाया। शकटारने सोचा कि अविवाहित,

आसनपर पहुँचा तो वहाँ आसनपर वैसे बालकको

यह विचारकर शकटार उस ब्राह्मणके अनुकूल बातें करता हुआ उसे अपने घर ले आया और राजपुरोहितसे मिलकर बड़ी ही युक्तिसे उसने राजा नन्दके पिताके क्षयाहश्राद्धमें ब्राह्मण-भोजनके रूपमें चाणक्यको

कपिशवर्ण, काले-काले नख तथा दाँतवाले एवं मेरे द्वारा निमन्त्रित इस ब्राह्मणको देखकर मेरा विरोधी मन्त्री राक्षस इसको श्राद्ध-भोजनके अयोग्य समझकर अपमानित करेगा और हुआ वही। राजा नन्द श्राद्धके

देखकर मन्त्री राक्षस बोला—'यह ब्राह्मण श्राद्ध-कर्मके योग्य नहीं है', तदनन्तर राक्षसकी मन्त्रणासे राजाने चाणक्यको अपमानितकर बाहर निकाल दिया। अपमानित ब्राह्मण चाणक्यने क्रुद्ध होकर प्रतिज्ञा की

कि जबतक राजा नन्दका वध (नाश) नहीं करवा

नामकाजानमा क्रॅंडटअंग्वेंस्डिक् बेदोक्ता इंग्लेंस्डिक् तुनुके प्रवासी का केर्या प्रकास के जिल्ला मार्च के जिल्ला मार्च कि प्रवास के जिल्ला मार्च के जिल्ला मार्च कि प्रवास के जिल्ला मार्च कि प्रवास के जिल्ला मार्च कि प्रवास के जिल्ला मार्च के जिल्ला मार्च कि प्रवास के जिल्ला मार्च मार्च के जिल्ला मार्च मार्च के जिल्ला मार्च मार्च

गीताप्रेससे प्रकाशित महापुराण—अब उपलब्ध कोड पुस्तक-नाम मू० ₹ कोड पुस्तक-नाम मृ० ₹ 2223) **श्रीअग्निपुराण**—सम्पूर्ण (श्लोकाङ्क्रुसहित) केवल हिन्दी 740 श्रीशिवमहाप्राण (दो खण्डोंमें) 1362 300 2224 1897 1898 <mark>श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण [म</mark>तान्तरसे] (दो खण्डोंमें) 🗤 संक्षिप्त पद्मपुराण 370 600 44 (दो खण्डोंमें) 🕠 संक्षिप्त श्रीनारदपुराण श्रीमद्भागवतमहापुराण 26,27 760 1183 300 ,, संक्षिप्त श्रीस्कन्दपुराण श्रीमत्स्यमहापुराण 557 380 279 480 श्रीविष्णुपुराण संक्षिप्त ब्रह्मपुराण 48 200 1111 160 संक्षिप्त श्रीमार्कण्डेयपुराण श्रीवामनपुराण 1432 180 539 120 ,, ,, श्रीकूर्मपुराण संक्षिप्त श्रीगरुडपुराण 1131 200 1189 230 ,, श्रीलिङ्गमहापुराण संक्षिप्त श्रीवराहपुराण 1985 300 1361 150 नरसिंहपुराण— संक्षिप्त श्रीब्रह्मवैवर्तपुराण 631 1113 120 280 सहस्त्रनामस्तोत्रसंग्रह (कोड 1594)

प्रस्तुत पुस्तकमें एक साथ श्रीगणपित, श्रीविष्णु, श्रीशिव, श्रीदुर्गा, श्रीसूर्य, श्रीराम, श्रीकृष्ण, श्रीलक्ष्मी-नृसिंह, श्रीगोपाल, श्रीराधाकृष्ण, श्रीहनुमान्, श्रीगायत्री, श्रीगङ्गा, श्रीयमुना, श्रीलक्ष्मी, श्रीअन्नपूर्णा, श्रीसीता, श्रीराधिका, श्रीलिलता, श्रीभवानी, श्रीदत्तात्रेय, श्रीवक्रतुण्ड-महागणपित—22 देवी-देवताओंके सहस्रनामावलीसिहत सहस्रनामस्तोत्र प्रकाशित किये गये हैं। परमात्मप्रभुकी प्रसन्नताके निमित्त पूजा-अर्चनाके लिये यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है। मूल्य ₹150

	सहस्रनामस्तोत्र (नामावलीसहित) अलगसे पाँकेट साइजमें भी									
कोड	पुस्त	क-नाम	मू०₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू०₹	कोड	पुस्तक-नाम		मू०₹
1599	श्रीशिव	सहस्त्रनामस्तोत्रम्	10	1664	श्रीगोपालसहस्त्रनामस्तोत्रम्	10	1706	श्रीविष्णुसहस्त्रनामस	तोत्रम्	10
1600	श्रीगणेश	गसहस्रनामस्तोत्रम्	10	1665	श्रीसूर्यसहस्रनामस्तोत्रम्	10	1707	श्रीलक्ष्मीसहस्त्रनामस	तोत्रम्	10
1601	श्रीहनुम	त्सहस्त्रनामस्तोत्रम्	10	1704	श्रीसीतासहस्त्रनामस्तोत्रम्	10	1708	श्रीराधिकासहस्रनाम	स्तोत्रम्	12
1663	श्रीगायः	रीसहस्त्रनामस्तोत्रम्	10	1705	श्रीरामसहस्त्रनामस्तोत्रम्	10	1709	श्रीगंगासहस्त्रनामस्ते	ोत्रम्	10

शतनामस्तोत्रसंग्रह (कोड 1850) पुस्तकाकार—प्रस्तुत पुस्तकमें गणेश, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, राम, कृष्ण, दुर्गा आदि विभिन्न देवों और देवियोंके शतनामस्तोत्रों एवं शतनामाविलयोंको प्रकाशित किया गया है। भक्तगण इसके माध्यमसे उपासना एवं पूजा करके यथोचित लाभ प्राप्त कर सकते हैं। मूल्य ₹35

नवरात्रके अवसरपर नित्य पाठके लिये 'श्रीरामचरितमानस'के विभिन्न संस्करण

कोड	पुस्तक-नाम	मूल्य ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मूल्य ₹
2295	चित्रमय श्रीरामचरितमानस-सटीक—ग्रन्थाकार	1600	2166	श्रीरामचरितमानस–सटीक, ग्रन्थाकार (साधारण संस्करण)	230
1389	<mark>श्रीरामचरितमानस—</mark> बृहदाकार (वि०सं०)	800	1563	ग मझला, सटीक (विशिष्ट संस्करण)	170
80	गृ बृहदाकार-सटीक (सामान्य संस्करण)	700	1436	🕠 मूलपाठ, बृहदाकार	400
1095	ग्रन्थाकार-सटीक (वि०सं०) गुजरातीमें भी	450	82	🥠 मझला साइज, सटीक, [बँगला, गुजराती, अंग्रेजी भी]	150
81	🕠 ग्रन्थाकार-सटीक, सचित्र, मोटा टाइप,		83	🕠 मूलपाठ,ग्रन्थाकार [गुजराती, ओड़िआ भी]	170
	[ओड़िआ, तेलुगु, मराठी, असमिया,		84	गृल, मझला साइज [गुजराती भी]	100
	नेपाली, गुजराती, कन्नड, अंग्रेजीमें भी]	400	85	ग्रम्ल, गुटका [गुजरातीमें भी]	60
1402	<mark>ः सटीक, ग्रन्थाकार (सामान्य संस्करण)</mark>	280	1544	·› मूल गुटका (विशिष्ट संस्करण)	70



LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENCE No. WPP/GR-03/2020-2022

गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित—श्रीदुर्गासप्तशतीके विभिन्न संस्करण

(शारदीय नवरात्र 26 सितम्बर सोमवारसे प्रारम्भ होगा)



गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित—शक्ति-उपासकोंके लिये कुछ विशिष्ट प्रकाशन

'श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण'—[सचित्र, मूल श्लोक, हिन्दी-व्याख्यासहित] (कोड 1897-1898) दो खण्डोंमें—इस महापुराणको (मूल श्लोक भाषा-टीकासिहत)-दो खण्डोंमें प्रकाशित किया गया है। इसके प्रथम खण्डमें 1 से 6 स्कन्ध एवं द्वितीय खण्डमें 7 से 12 स्कन्धकी कथाएँ दी गयी हैं। दोनों खण्डोंका मूल्य ₹600, **संक्षिप्त श्रीमदेवीभागवत [मोटा टाइप] (कोड 1133) ग्रन्थाकार**—मूल्य ₹350, गुजराती, कन्नड, तेलुगु भी उपलब्ध।

महाभागवत [देवीपुराण] (कोड 1610) हिन्दी-अनुवादसहित—इस पुराणमें मुख्यरूपसे भगवतीके माहात्म्य एवं लीला-चरित्रका वर्णन है। इसके अतिरिक्त इसमें मूल प्रकृतिके गंगा, पार्वती, सावित्री, लक्ष्मी, सरस्वती और तुलसीरूपमें की गयी विचित्र लीलाओंके रोचक आख्यान हैं। मृल्य ₹170

देवीस्तोत्ररत्नाकर (कोड 1774) पुस्तकाकार—इस पुस्तकमें भगवती महाशक्तिके उपासकोंके लिये देवीके अनेक स्वरूपोंके उपासनार्थ चुने हुए विभिन्न स्तोत्रोंका अनुपम संकलन किया गया है। मुल्य ₹45 शक्तिपीठदर्शन (कोड 2003)—प्रस्तृत पुस्तकमें भगवतीके 51 शक्तिपीठोंके इतिहास और रहस्यका विस्तृत वर्णन है। मूल्य ₹25

शक्ति-अङ्क (कोड 41) [सचित्र, सजिल्द] ग्रन्थाकार—इसमें परब्रह्म परमात्माके आद्याशक्ति-स्वरूपका तात्त्विक विवेचन, महादेवीकी लीला-कथाएँ एवं सुप्रसिद्ध शाक्त भक्तों और साधकोंके प्रेरणादायी जीवन-चरित्र तथा उनकी उपासनापद्धितपर उत्कृष्ट उपयोगी सामग्री संगृहीत है। मूल्य ₹250

> booksales@gitapress.org थोक पुस्तकोंसे सम्बन्धित सन्देश भेजें। gitapress.org सूची-पत्र एवं पुस्तकोंका विवरण पढ़ें।

कुरियर/डाकसे मँगवानेके लिये गीताप्रेस, गोरखपुर—273005 book.gitapress.org/gitapressbookshop.in

If not delivered; please return to Gita Press, Gorakhpur—273005 (U.P.)